# केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका

२ जूलाई : २ अक्तूबर २०११ अंक, वर्ष १७, नं ५६ : ५७, लक्ष्मीनगर, पट्टम पालस, तिरुवनन्तपुरम - ६९५ ००४

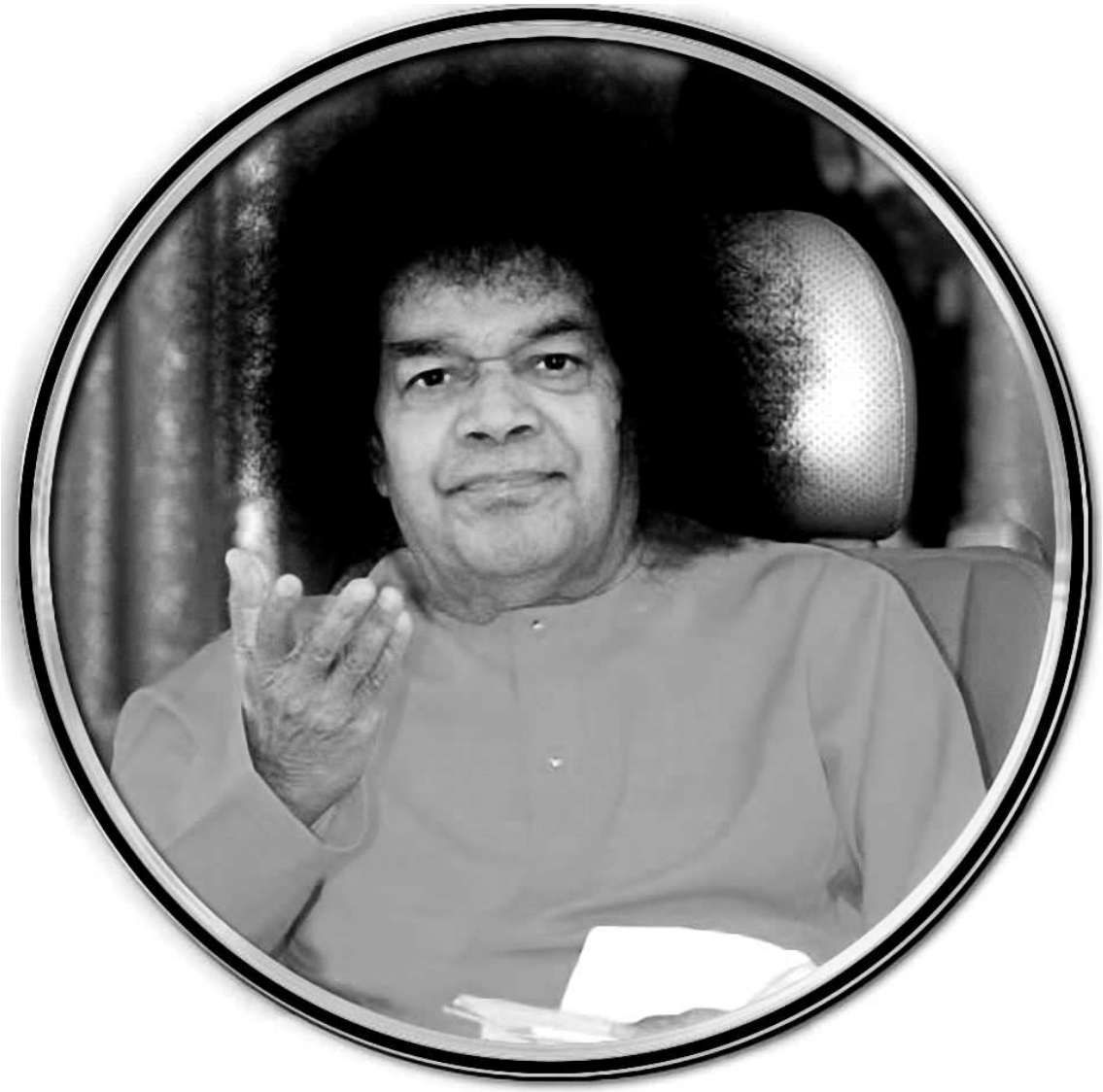

## विश्वचेतना के प्रतीक बाबा भक्तजनों के हृदय में स्मृतिशेष होगये...

# 3rd Viswa Hindi Sammelan New Delhi - 1983

# केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका

२ जूलाई ९९ & अक्तूबर २०११ अंक, वर्ष १७, नं ५६ & ५७, लक्ष्मीनगर, पट्टम पालस, तिरुवनन्तपुरम - ६९५ ००४



**सम्पादक**

**डा० एन० चन्द्रशेखर नायर**

**संरक्षक**

**श्रीमती शांता बाई (बेंगलोर)**
**श्री. डी.शशांकन नायर**
**श्रीमती कमला पद्मगिरीश्वरन**
**डा० वीरेन्द्र शर्मा (दिल्ली)**
**डा० अमर सिंह वधान (पंजाब)**
**श्री. हरिहरलाल श्रीवास्तव (वारणासी)**
**श्रीमती के. तुलसी देवी, (चेन्नै)**

**परामर्श-मण्डल**

**डा० बि.के.नायर**
**डा० एन.रवीन्द्रनाथ**
**डा० एस.तंकमणि अम्मा**
**डा० वी.पी.मुहम्मद कुंजु मेत्तर**
**डा० मणिकण्डन नायर**
**डा० पी.लता**
**श्रीमती आर. राजपुष्पम**



**सम्पादकीय कार्यालय**

**श्रीनिकेतन, लक्ष्मीनगर,**
**पट्टम पालस पोस्ट**
**तिरुवनन्तपुरम-६९५ ००४**
**दूरभाष-०४७१-२५४१३५५**

**प्रकाशकीय कार्यालय**

**मुद्रित : (द्वारा)**
**श्रीरामदास मिशन मुद्रणालय,**
**चेंकोट्टकोणम, तिरुवनन्तपुरम-८७**
**मूल्य-एक प्रति: २०.०० रुपये**
**आजीवन सदस्यता : १०००.००**
**संरक्षक : २०००.००**


**केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका कहाँ कहाँ जाती है?**

कन्याकुमारी, मैसूर-२, महाराष्ट्रा, मणिपुर, मद्रास-६, कलक्कता-२, नई दिल्ली (अनेक स्थान), गुन्डूर, त्रिवेन्द्रम (अनेक जगहें), बागपत (यु.पी.) उन्नाव (उ.प्र.), बिलासपुर (म.प्र.), गुंतकल, जबलपुर, इलहाबाद, अहमदाबाद, बिरख्डी, जमशेदपुर, लातूर, हैदराबाद, रतलाम, देवरिया, गाजियाबाद, इम्फाल, चुडीबाज़ार, पीली भीत, फिरोजाबाद, अम्बाला, लख्नऊ, बलांगीर, बिहार, पटना, गया, बांका, ग्वालियर, भगलपुर, देवधर, जयपुर, बनारस, तृशूर, आलप्पुषा, मेरठ केन्ट, कानपुर, उज्जैन, पानीपत, होरंगाबाद, सीतामठी पोस्ट, प्रतापगढ, सरगुजा, बिजनौर, भीलवाडा, सतना, रेलमंत्रालय, तिरुवल्ला, वर्कला, कोट्टयम, नई माही, ओट्टप्पालम, चेप्पाड, लक्किडि, नेय्याट्टिनकरा, कोषिकोड, पय्यन्नूर, कोल्लम, मान्नार, मंगलोर, पुरनपुर, पंजाब, विशाख्पटनम

**केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय नई दिल्ली द्वारा निर्देशित जगहें :**

**तमिल नाडु:-** अरुम्बाक्कम, तोरापक्काओ, मद्रास, चेन्नै-३२, क्रोमोपेट्टा, चेन्नै-२१, चेन्नै-२, चेन्नै-८, कान्चीपुरम, तिरुचिरापल्ली, तिपुचिरापल्ली-२, नोर्त अरकोट, ताम्बरम, कोयम्बतूर, सेलम, सेलम-२६, चेन्नै-३४, चेन्नै-२४, तिरुचिरापल्ली-२, चेन्नै-३०, कोयम्बतूर-४, चेन्नै-२८, चेन्नै-८६। **गुजरात:-** अहमदाबाद, बरोडा। **कर्नाटक:-** बांगलोर, चित्रदुर्ग, श्रीनिगेरी, मौंगलोर, मैसूर, हस्सन, मान्डीया, चिगमौंगलोर, षिमोग, तुमकूर, कोलार। **महाराष्ट्रा:- मुम्बई,** कोलाबा-मुम्बई, मुम्बई-२०२, माटुंगा, मुम्बई-८, मुम्बई-८६, अन्देरी-६९, मुम्बई-२६, मुम्बई-८७, मुम्बई-२, औरंङगाबाद-३, औरंङगाबाद-२, औरंङगाबाद, औरंङगाबाद-२, नागपुर, रामटाक-नागपुर, सताना, नन्दगौन-नासिक, पूना, पूना-१, पूना-४, मानमाड-नासिक, चन्द्रपुर, अमरावती, कन्डहार, कोलहापुर, बानडरा, अकोला, नासिक, अहमदनगर, जलगौन, दुलिया, सांगली-कोलहापुर, षोलापुर, सतारा, सान्ताक्रूस, बारसी-४१३, माटुंगा, संगली-४१६। **वेस्ट बंगाल:-** कलक्कत्ता। **हैदराबाद:-** सुल्तान बाज़ार। **गौहाटी:-** कानपुरा। **नई दिल्ली:-** आर, के पुरम। गोवा:- मपुसा-५०७।

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेख्क के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं हैं। सम्पादक

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध-पत्रिका केरल विश्व विद्यालय से अनुमोदित पत्रिकाओं की सूची में शामिल की गयी है। (संपादक)

**www.hindisahityaacademy.com**

**सम्पादकीय**

# एन्डोसल्फान का निर्माण केन्द्र सरकार बंद करें!

३९ ग्रामपंचायतों के जिले के आकाश से केन्द्र सरकार ने विषवर्षा बरसा दी पच्चीस वर्षों से। आज उस जिले में मुश्किल से बच्चों का जन्म होता है, लेकिन बे बच्चे अनेकविध मारक बीमारियों के शिकार होकर बाल्यावस्था में ही निष्क्रिय एवं पंगू हो जाते हैं। उन बच्चों के बुरे अनुभवों और मर्मांतक कष्टताओं के कारण वे सब परिवार सदा-सर्वदा दुःखों में डुबे रहते हैं। उत्तर केरल के कासरगोड जिले में एक ग्राम है बैल्लूर। आज उस ग्राम में अनेक बालक और बालिकाएं शारीरिक पीड़नों के कारण केरल प्रांत का हीं नहीं सारे देश की ही शांतिभंग कर रहे हैं। वहाँ के दो-तीन चित्र, जिहें मातृभूमि के मधुराज ने लिया है नीचे दिये गये हैं। शरीर पूरा व्रण बाधित असंख्य बालकों के फोटो और भी हैं।

आज एन्डोसल्फान के दोष-फल से पीडित होनेवाले लोग दुनिया भर फैले पडे हैं। इस जानकारी के कारण आज उस मारक कीटनाशिनी का निर्माण बंद करने का श्लोगन विदेशों में मुखरित होने लगा है। भारत में सर्वत्र इस विष के खिलाफ चर्चा सम्मेलन, सेमिनार, सत्याग्रह, जुलूस आदि प्रभूत मात्रा में हो रहे हैं। पटयावूर स्वदेशिनी लीलाकुमारी जैसे व्यक्तिगत तल पर और समूह तल पर भी केन्द्र सरकार के नाम पर मुकदमे दायर किये गये हैं। परन्तु, फिर भी सरकार अपने निश्चय पर अड़ी रहती है कि एन्डोसल्फान से कोई रोग या नुकसान नहीं होता। यह भी सुनने में आते हैं कि केन्द्र कृषि मंत्री शरद पवार एन्डोसल्फान के पक्ष में हैं और इस कारण से मंत्रिपद से इस्तीफा देना ज़रूरी है, ऐसी उद्घोषण परिस्थिति प्रेमी वन्दना शिवा ने की है। कल उन्होंने कहा कि भारत सरकार को शरद पवार को मंत्रि पद से निकाल देना चाहिए।

एन्डोसल्फान की समस्या पर निरीक्षण करने एवं उसपर रिपोर्ट देने के उद्देश्य से सरकार से समिति गठित की गयी। अक्सर किसी विषय पर समिति होती है, तो, यदि सरकारी समिति है, तो समिति प्रस्तुत जगह का प्रकृति सौदर्य देखकर उसकी प्रशंसा करके लौट जायेगी। यहाँ भी, सुना है, ऐसा ही हुआ है।

इस पर क्रुद्ध होकर कासरगोड में कल (17-4-2011) एक देशीय सेमिनार आयोजित हुआ। मंत्री बिनोई विश्वम ने अपने अध्यक्ष भाषण में बताया कि भारत सरकार इस विष व्यापन के सन्दर्भ में नपुंसकता का व्यवहार करती है। इसके दूषित परिणाम पर खोज करने का अब ज़रूरत नहीं है, असंख्य प्रमाण सामने हैं। उन्होंने यह भी कहा प्लांटेशन कोरपरेशन को दी गयी भूमि वापस लेकर विष पीडित जनता को बाँट दें।

प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ श्री.वि.एम.सुधीरन ने साफ-साफ कहा कि एन्डोसल्फान लोबी शक्तिशाली है। इस लोबी को खोलकर दिखाना है। जिलेमें 1529 लिटर विष है। उसको निर्वीर्य करना है और इसका निर्माण बंद करना चाहिए। एक साथ सारे एम.पी. सदस्य सरकार को आदेश दें कि इसका निर्माण बंद करें।

केरल के सभी राष्ट्रीयदल प्रधान मंत्री से इस बारे में शिकायत करने के लिए जानेवाले हैं। मुख्य मंत्री भी प्रश्न पर जागरूक हैं।

**डा.एन.चन्द्रशेखरन नायर**

**लीलाकुमारी**

# सद् गुरवे नमः

डॉ. एन.चन्द्रशेखरन नायर अनुवाद (मलयालम से) एल.कौसल्या अम्माल

गुरुर्ब्रह्मः गुरुविष्णुः
गुरुर्देवो महेश्वरः
गुरुसाक्षात् परब्रह्मः
तस्मै श्री गुरवे नमः

**गुरुसंकल्प** भारतीय सिद्धांत का एक सुप्रधान भाग है। त्रिमूर्तियों के भी आगे हैं गुरु। उसकी युक्ति यह है कि गुरु ही ईश्वर को दिखानेवाले हैं। गुरु-स्मरण भारतीय जनों के कर्म करते समय की एक दीपाराधना है। गुरु ज्ञान-प्रज्ञान का आगर हैं। योग शास्त्रकार पतञ्जली की राय इस प्रकार है:

सः एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्) (योग १-१-२६) सृष्टि की आदि में हुए अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरस, ब्रह्मर्षि आदि प्राचीनों के, हमारे और हमारे बाद में होने वाले सभी के ईश्वर गुरु हैं। ईश्वर नित्य है। क्षणादि कालांश का असर न ईश्वर पर पड़ेगा, न उनके बारे में प्रचार भी करेगा। यह जान लें कि वह ईश्वर अविद्या जैसे क्लेशों या पाप से ग्रस्त या उसकी वासनाओं से युक्त नहीं, जिसमें नित्य, निरतिशय और स्वाभाविक ज्ञान एक समान है, उसके द्वारा-ईश्वर के द्वारा निर्मित वेदों की नितांतता और सत्यार्थ-परायणता एवं बिलकुल संशयातीत है। (चतुर्वेद पर्यटन पृ.२०)

वेद में ईश्वर ने स्वयं जो गुरुवर्णन किया है वह असत्य नहीं हो सकता। उपर्युक्त प्रतिपादन और श्लोक से इस तत्व का समर्थन किया गया है। इस विश्वास के अनुभव के कथोपकथन अनन्त हैं।

महाभारत काल के एकलव्य की और आधुनिक युग के स्वामी विवेकानंद की गुरु-भक्ति पुलक पैदा करनेवाली है। भगवद्गीता के ग्यारहवें अध्याय में प्रतिपादित है कि अर्जुन भगवान का विश्वरुप देखकर पश्चात्ताप के कारण क्षमायाचना करते हैं इसलिए कि उन्होंने सखा, मित्र जैसे शब्दों से संबोधना करके उनकी हँसी उड़ाई थी और साथ ही साथ उन्हें अतिश्रेष्ठ, पूज्य-गुरु आदि मानकर प्रार्थना भी करते हैं जिससे गुरुमहिमा का अपार श्रेय प्रकट होता है।

"पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्।" (भगीः ११-४३)

गुरु नामक पद के लिए स्मृतिकार विष्णु नामक आचार्य ने जो मान दिया है वह इस प्रकार है-

"निषेकादीनि कर्माणि
यः करोति यथाf विधिः,
संभावक्षति चान्नेन
न्न विप्रो गुरुः न उच्यते।।"

भारत ने गुरुओं को वैज्ञानिक, सदाचारी, तत्वदर्शी, दार्शनिक और महान ऋषिवरों के समान देखा है। ऐसे श्रेष्ठों में से कई अपने ही गुरुकुल चलाया करते थे। प्रशस्त गुरुकुलों को उद्जीवित करना उस समय के राजा-महाराजा अपना कर्तव्य सोचते थे। सान्दीपनी महर्षि का गुरुकुल जहाँ कृष्ण और बलभद्र ने गुरुकुल वास का आनंद उठाया था, शौनकाचार्य का गुरुकुल नैमिषाकारण्य, मालिनी नदी नट पर स्थित कण्व महर्षि का गुरुकुल व्यास, विश्वामित्र और वसिष्ठ महर्षियों के हिमालय प्रांतों के गुरुकुल आदि वहुत ही विख्यात हैं।

उस समय समग्र-ज्ञान ही थे पाठ्य-विषय। लगभग एक ही आचार्य के शिष्यत्व में शिक्षा की पूर्ति भी हो जाती थी। वेद, ब्राह्मण्य, आरण्यक, दर्शन, उपनिषद, इतिहास-पुराण, मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्र, शुक्राचार्यादियों के नीति-शास्त्र, कौटिल्यादियों के राष्ट्र तंत्रीय अर्थशास्त्रादि पठन ऐसे अतिविशाल ज्ञान गुरुकुलों से ज्ञानान्वेषी प्राप्त करते थे। इसके अलावा वर्णाश्रमों की रखवाली करके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदियों के लिए आवश्यक पढ़ाई भी होती थी।

जीवन-वृत्ति ही गुरुकुल संप्रदाय का आचरण था। लेकिन गुरुओं के अपने ही खर्च में शिष्यों को शिक्षा दी जाती थी। शिष्यगण गुरु और गुरुकुल की सेवा बड़ी ही श्रद्धा के साथ करते थे। गुरु और गुरु-पत्नी शिष्यों को स्व पुत्र के समान मानते थे। शिक्षा समाप्ति के बाद जब वे लौटते हैं तभी गुरु-दक्षिणा के रुप में कुछ न कुछ स्वीकार करते थे। यह भी निषिद्ध था कि गुरु को ज़बरदस्ती गुरुदक्षिणा स्वीकार करने के लिए प्रेरित करें।

इस संदर्भ पर हम याद करेंगे उस कहानी को जिसमें कौल्स नामक शिष्य ने वरतंतु महर्षि को गुरु दक्षिणा के

लिए उकसाया था। दो कच्चे बाँस के टुकड़ों के घर्षण से भी अग्नि का स्फुलिंग जिस प्रकार निकलता है उसीप्रकार हो गया दो सात्विकों के मनों को कलुषित किए जाने का वह मिसाल। गुरु-शिष्य दोनों के परस्पर कुंठित होने के उदाहरण भी उपलब्ध हैं।

यह कहानी प्रसिद्ध है कि शुक्राचार्य वामन को पहचानकर अपने शिष्य को तीन ही पग भूमि माँगने से मना करते हैं और अपने उपदेश को न मानने से शिष्य के कमण्डलु की पूँछ। बैठकर उसके वचनों में बाधा डालते हैं शिष्य शुक्राचार्य को अँधा बनाता है और शुक्राचार्य शिष्य को शाप देते हैं।

अपने प्रिय शिष्य अर्जुन को तृप्त करने के लिए एकलव्य का अंगूठा गुरुदक्षिणा के रूप में लेनेवाले आचार्य द्रोण की कहानी भी प्रसिद्ध है। एकलव्य नामक कानन कुमार, जो मनसा अपने गुरु रूप में द्रोणाचार्य को वरण करके अनुगृहीत हो गया यह शायद शिष्य की ठोस महत्ता की स्वीकृति होगी:

"काक चेष्टा बगध्यानम्
श्वाननिद्रा तथैव च
जीर्ण वस्त्रम् मिताहारम्
एवं विद्यार्थी लक्षणम्।"

भगवान रामकृष्ण देवने जो कहानी कही है वह भी इधर उद्धरित है। संदर्भ यह है कि बड़े ही प्रसिद्ध एक गुरु ने अपने पास शिष्य बनने आए एस युवक को ऐसी पेटी बिना ताला लगाए सौंपी और उससे कहा कि बडे ध्यान से यह पेटी अमुक मित्र को सौंप दे। लौट आओ, तो तुम को अपना शिष्य बना लूँगा। बीच रास्ते में युवा के मन को अतिमोह ने घेर लिया बिना ताला लगाए इस पेटी में कौन सी दिव्य वस्तु! जंगल से होकर पैदल चला वह युवक धीरे कौतुकवश पेटी के ढक्कनको खोल कर देखता है। पेटी में जो विशिष्ट वस्तु थी - वह चूहा - पेटी से कूदकर जंगल में ओझल हो गया। शिष्य बनने केलिए आए शिष्य की परीक्षा गुरु ने इस प्रकार ली। अनुशासन का महत्व!

इस संदर्भ में एक महान गुरु का मैं स्मरण करता हूँ जो हैं प्रो. एम.एच.शास्त्री नामक पंडितश्रेष्ठ और देवभाषा संस्कृत के परमाचार्य। शतायु को प्राप्त शास्त्रीजी एक श्रेष्ठ गुरु की विख्याति प्राप्त सात्विक पुरुष हैं। तेरह बरस का बालक मुझे उनके शिष्य बनने से वंचित रखा। कारण यह है कि उस समय मैं ने संस्कृत नहीं सीखा। शास्तांकोट्टा नामक गाँव का बालक तिरुवनन्तपुरम् शहर की संस्कृत पाठशाला में कैसे पढ़ पाता था! पर एक प्रकार से हम दोनों मित्र हैं। तिरुवनन्तपुरम के महात्मागाँधी कालिज के हिन्दी प्रोफसर मेरे एक नाटक देवयानी को उन्होंने सन्तोषपूर्वक संस्कृत में अनुवाद करके दिया। मैं ने उसका प्रकाशन भी किया। इस उभय भाषा संबंध ने हमें भारतीय संस्कृति का मित्र बनाया। देवयानी ने असंख्य भाषाओं से होकर संबंध बनाए रखा।

(पराशक्ति के उस वरद पुत्र को शत-शत अभिवादन जो इस पुण्य भूमि भारत की अपनी भाषा के द्वारा साहित्य और संस्कृति की चोटी तक पहुँचे।)

**अनुवाद (मलयालम से) एल.कौसल्या अम्माल**

## ये भी शोध-पत्रिका के आजीवन सदस्य बने (95)

**डॉ. पंडित बन्ने एम.ए.नेट, बी.एड.एम.फिल., पीएच्.डी.**

जन्म स्थान : कंदलगांव, करमाला, सोलापूर (महाराष्ट्र)

प्रकाशित ग्रंथ : उपेंद्रनाथ अश्क, हिंदी का वैश्विक परिदृश्य, भाषा विज्ञान एवं हिंदी भाषा, एकांकीकार उपेंद्रनाथ अश्क, मीडिया और हिंदी, हिंदी साहित्य में दालित विमर्श, राज्यस्तरीय संगोष्ठियों में आलेख्र प्रस्तुत। पत्रिकाओं में लेख्रन।

सदस्य : हिन्दी विकास मंच, महाराष्ट्र।

सम्मान : आदर्श शिक्षक पुरस्कार (ड्रिम फाउण्डेशन, सोलापुर)

सम्पर्क : स. प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, भारत महा विद्यालय, जेऊर, सोलापूर-४१३२०२, महाराष्ट्रा

# हिन्दी पर गहराता संकट

**डॉ. केशव फालके**

**भारतीय** संविधान के राजभाषा सम्बन्धी अनुच्छेद 343 धारा 01 के अनुसार भारत संघ की राजभाषा हिन्दी और उसकी लिपि देवनागरी 14 सितंबर 1949 को सर्व सम्मति से निर्धारित की गयी। आगे अनुच्चेद 343 की ही धारा 02 के अनुसार संविधान लागू होने के (26 जनवरी 1950) आगामी 15 वर्षों तक अर्थात् 25 जनवरी 1965 तक सरकारी कामकाज के लिये अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखने का प्रावधान किया गया। लेकिन अनुच्छेद 343 की ही धारा 03 के अनुसार संसद को यह अधिकार भी दे दिया गया कि संसद द्वारा राजभाषा अधिनियम पारित करके 26 जनवरी 1965 के बाद भी सरकारी कामकाज में अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखा जा सकेगा। इसी प्रावधान का लाभ उठाकर राजभाषा अधिनियम 1963 (संशोधित 1967) के अनुसार 26 जनवरी 1965 के बाद भी सरकारी प्रयोजन के लिये अंग्रेजी का प्रयोग जारी रखा गया जो आज तक बे-रोकटोक जारी है और आगे भी जारी रहेगा यदि कोई कारगर उपाय नहीं किया गया तो। वास्तव में यह प्रावधान संविधान में दर्ज राजभाषा सम्बन्धी मूलभूत भावना के सर्वथा प्रतिकूल है और हिन्दी की अवमानना करने वाला भी। अब खुल कर यह कहने का समय आ गया है कि यह संशोधन संभवतः एक सोची समझी साजिश के तहत किया गया है। यह सीधे-सीधे अंग्रेजीदाँ राजनेताओं, बेजवाबदार प्रशासकीय अधिकारियों और हिन्दी जगत में पनप रहे आस्तीन के साँपों की तिरंगी मिली भगत का परिणाम है। यह सीधा-सीधा अंग्रेज़ी विरुद्ध हिन्दी का महासंग्राम है। इसका एक मात्र उपाय अब यही है कि राष्ट्रीय स्तर पर एकजुट होकर दृढ़ संकल्प के साथ राजभाषा अधिनियम (1963 (संशोधित अधिनियम 1967) को संसद द्वारा सामान्य बहुमत के बल पर निरस्त किये जाने की शक्ति खड़ी की जाये।

हिन्दी के संदर्भ में केन्द्र सरकार के कर्णधारों की इस ढुलमुल नीति का नाजायज फायदा उठाते हुए अलग अलग स्तरों पर हिन्दी को काटने-छाटने और दुर्बल बनाने की घिनौनी कोशिशें की जा रही हैं। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज 22 भारतीय भाषाओं की संख्या को बढ़ाने का स्वार्थ-प्रेरित प्रयास किया जा रहा है। शक्तिशाली संस्थानों में बैठे कुछ लोग इस महान कार्य को अंजाम देने में लगे हुए हैं। ऐसा ही एक संस्थान है नयी दिल्ली में स्थित "साहित्य अकादेमी" जो जी-जान से अंग्रेज़ी को एक भारतीय भाषा बनाने की जद्दोजेहद में पूरी शक्ति से जुटा हुआ है। "साहित्य अकादेमी" ने उसके एक पत्र क्रमांक SA/16/14/38248 दिनांक 11 फरवरी 2009 द्वारा एक दिवसीय राष्ट्रीय बैठक 05 मार्च 2009 को "रवीन्द्र भवन", नयी दिल्ली में आमंत्रित की थी। इस बैठक का उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं के उच्च अकादमिक स्तर को प्रेरित प्रोत्साहित करना, उनकी साहित्यिक गतिविधियों में समन्वय साधना और उनके माध्यम से राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा देना दर्शाया गया था। अकादेमी ने उसके पत्र में यह स्पष्ट उल्लेख भी किया था कि "साहित्य अकादेमी" भारत की 24 भाषाओं को मान्यता देती है जिनमें भारतीय संविधान की आठवीं सूची में दर्ज 22 भाषाएँ शामिल हैं। यह भी स्वीकार किया गया कि साहित्य अकादेमी पहले से ही अंग्रेजी और राजस्थानी में कार्यक्रमों का आयोजन करती आ रही हैं। इसी बिन्दु पर मेरा स्पष्ट मत है कि साहित्य अकादेमी अनुकूल अवसर पाकर धीरे से अंग्रेजी और राजस्थानी को संविधान की आठवीं अनुसूची में मान्यता दिलवाकर दर्ज करवाना चाहती है। यहाँ पर यह भी याद रखना होगा कि ऐसे प्रयासों का आरंभ नागलैंड में अंग्रेजी को राजभाषा का दर्जा देकर किया जा चुका है। एक विदेशी भाषा अंग्रेजी को भारतीय भाषा का दर्जा दिलवाने का खुल्लम-खुल्ला प्रयास "साहित्य अकादेमी" कर रही है। परिणाम स्वरूप निकट भविष्य में अंग्रेजी सम्पूर्ण राजभाषा का दर्जा प्राप्त करेगी और हिन्दी उसके संवैधानिक अधिकार से सदा सदा के लिए वंचित कर दी जायेगी। हिन्दी के समर्पित वफ़ादार समर्थकों को "साहित्य अकादेमी" की इस चाल को अविलम्ब सोचना-समझना है। अकादेमी द्वारा राजस्थानी को संथाली की राह पर चलवाने की

# डा. रामनिवास मानव की कविता में उत्तरांचल

सिन्धु एस.एल.

**प्रकृति** और संस्कृति का सुन्दर मिलन भारतीय कविताओं में हुआ है। प्रकृति की गोदी में हिन्दी भाषा के कई कवि पले हुए हैं और प्रकृति के विभव उनकी कविताओं की संपत्ति बन गये हैं। हिम की आर्द्रता, कुहरे का स्पन्दन, बर्फकी एकान्तता आदि से आपूरित हिमालय के मध्यभाग में स्थित उत्तरांचल प्रकृति सुषमा की पुत्री है। वही उत्तरांचल डा.रामनिवास 'मानव' की कविता का विषय बन गया है।

"उत्तरांचल पर लेखनी चलाते हुए डा. मानव उसे कविता में ढालना उसी तरह कठिन पाते हैं, जैसे खुशबू हाथों में समेटना और तित्तलियों को हथेलियों पर पालना दुष्कर होता है। कविता पर कविता लिखना आसान नहीं होता। उत्तरांचल सुन्दर, सरस, सरल स्वयं में एक सजीव कविता है।" (1)

उत्तरांचल प्रकृति-रमणीयता की रंगभूमि है। पहाडियों के शिखरों पर बर्फ की ओढनी में सूरज की रश्मियों का बिखेरना मन के कोण-कोण में छिपी कवि भावना को जागृत करता है। उत्तरांचल साधना का शिखर है।

"तभी तो उत्तरांचल
मेरे मन में बसता है
मुस्कराता है, हंसता है
सपनों में जगता है" (2)

---

**हिन्दी पर गहराता संकट....**

साजिश भी भलीभांति समझ लेने की आवश्यकता है। भोजपुरी और छत्तीसगढ़ी के समर्थकों ने भी बिगुल फूँक दिया है। महाराष्ट्र के एक सांसद ने भी भोजपुरी को आठवीं अनुसूची में दर्ज करवाने के लिए सार्वजनिक अपील ही कर दी है।

इस प्रकार यदि भारतीय भाषाएँ आठवीं सूची में स्वयं को दर्ज कराने लगेंगी तो परिणाम क्या होंगे इस पर गंभीरता से सोचने-विचारने की आवश्यकता है। मैथिली के आठवीं सूची में दर्ज होते ही मिथिलांचल राज्य की मांग की जा रही है। क्या आगे आठवीं सूची में जाते ही अन्य भाषाएँ भी इसी प्रकार अलग राज्य मांगने लगेंगी? यदि ऐसा होने लगे तो देश को और कितने छोटे-छोटे राज्यों में बाँटा जायेगा। इस प्रकार विभाजन से सबसे अधिक हानि हिन्दी की हीं होगी। हिन्दी की बोलियाँ भाषाएँ बनेंगी तो हिन्दी कहाँ रह जायेगी? क्या सिमट कर जहाँ से चली थी वहाँ अर्थात मेरठ-दिल्ली के आसपास पहुँच जायेगी। संख्या-बल के आधार पर ही तो हिन्दी की हैसियत निर्भर है। संख्या-बल के आधार पर ही तो विश्व-हिन्दी का सपना देखते रहे हैं हम। श्री मधुकरराव चौधरी के प्रस्ताव पर विचार करके इसी संख्या-बल के आधार पर ही तो राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के तत्त्वावधान में, स्व. इंदिरा गाँधी के सौजन्य से और स्व. पद्मश्री अनंत गोपाल शेवड़े के नेतृत्व में नागपुर में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन का भव्य आयोजन किया गया था। उसके बाद के सात विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी की हैसियत बढ़ाने के महान उद्देश्य से ही तो आयोजित किये जाते रहे हैं। मॉरिशस में "विश्व हिन्दी सचिवालय" की स्थापना किसलिये की गयी? वर्धा में "महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्व विद्यालय" की स्थापना का प्रयोजन क्या रहा है? संयुक्त राष्ट्र संघ में सातवीं भाषा के रूप में हिन्दी की मान्यता के लिए इतनी जद्दोजेहद हम क्यों करते आ रहे हैं? इन सभी प्रश्नों के उत्तर आज हमें खोजना होगा। मसला केवल आठवीं सूची में शामिल होने तक सीमित नहीं है। हिन्दी के अस्तित्व का खतरा दिखाई दे रहा है। देश में छोटे-छोटे राज्यों के विभाजन का खतरा दिखाई दे रहा है। सर्वोपरी राष्ट्रीय ऐकता का खतरा दिखाई दे रहा है। "हिन्दी भारत माता के भाल की बिन्दी" में विश्वास रखते आ रहें हम कैसे विचलित न हों? गहन पीड़ा इस बात की है कि यह खतरा हमारे अपने लोगों के कारण ही उपजा है। इसी पीड़ा को मैंने अग्रांकित पंक्तियों में व्यक्त किया था। (शेष अगले अंक में)

**३०२, बी.विंग, शुभ सदन, ५९, तिलक नगर, चेम्बूर, मंबई-४०००८४**

कवि को लगता है, धरा पर स्वर्ग उतर आया है। उत्तरांचल वास्तव में अद्‌भुत रूप-सौन्दर्य का आगार है। बर्फ की सफेद चादर ओढ़कर नन्हे खरगोश की करह वह सो रहा है।

"यहाँ नहीं है बनावट
यहां नहीं है सजावट
यहां नहीं है दिखावट" (3)

कवि का मत है कि सचमुच उत्तरांचल को कविता में ढालना आसान नहीं है। क्षितिज तक फैली हिमगिरि की चोटियाँ एकांत संगीत में तपस्या कर रही हैं। घोरियों में घने गहरे बादल छाये हैं और प्रकृति अपनी आँखों में काजल लगा रही है।

'मानव' के इन कविताओं से एक प्रदेश-विशेष की खूबियाँ चित्रित की हैं। उत्तरांचल की प्रकृति और संस्कृति यहाँ प्रकट हैं। प्रकृति की धड़कन इन कविताओं से महसूस कर सकते हैं।

"तुम्हारी फैली बाहें
याद दिलाती हैं मुझे
अपने पिता की, अनायास।
जैसे कह रही हैं,
चले आओ, मेरे बच्चे!" (4)

'पहाड के बातचीच' के प्रसंग में मानव के मन में होनेवाली अनुभूतियाँ ऊपर उद्‌धृत हैं। कवि सचमुच पहाड की छाती में खो जाना चाहते हैं।

नैनिताल का वर्णन देखिए,

"पहाड़ी पर आकाश है
झील में उजास है
और पैसे धरा पर
साक्षात् स्वर्ग का आभास है।" (5)

ऋषिकेश का चित्र सीप में मोती जैसा खींचा है। लहराती, बलखाती, चढ़ी, उतराती, नागिन-सी जानेवाली सड़कें कवि को दुनिया का सबसे बडा आश्चर्य लगता है।

प्रकृति सुषमा की इस भूमि के भाग्य में लेकिन ऐसा भी लिखा है,

"जाने क्या लिखा है
पहाड़ के भाग्य में
एक ओर, दिन-प्रतिदिन
रोटी-रोटी की तलाश में
बढ़ता पलायन" (6)

प्रकृति माँ सब देती हैं। फिर भी स्वार्थी मनुष्य उनका शोषण कर रहे हैं। प्रकृति का प्रदूषण हो रहा है।

"बढ़ता पर्यटन
फैलता प्रदूषण"

तीर्थाटन, पर्यटन में परिवर्तित हो गया और व्यवस्था-विधान जर्जर होता जा रहा है। पद-प्रतिपद अतिक्रमण बढ़ रहा है।

'मानव' का 'उत्तरांचल में कविता' नामक काव्य-संकलन उत्तरांचल की प्रकृति और संस्कृति का दस्तावेज़ है। मुक्तछंद की स्वतंत्र कविताओं के द्वारा वे पाठकों को उत्तरांचल पहूँचाने में समर्थ निकले। प्रकृति और संस्कृति की सुन्दरता और उसके प्रति होनेवाले अत्याचार कविता का विषय बन गया है। सांस्कृतिक और प्रकृतिक-प्रदूषण यहां स्पष्ट हैं,

"कितना-कुछ देती है
माँ प्रकृति हमें!
फिर भी हम
किसी स्वार्थी, शरारती
बच्चों की भांति
नोच जा रहे हैं
अपनी ही माँ का जिस्म।" (7)

डा. रामनिवास मानव की कविताएँ प्रयोगधर्मी मानी जा सकती हैं। इन कविताओं में काव्य और यात्रावृत्त का सुन्दर समन्वय हुआ है। कवि ने उत्तराखंड की प्रकृतिक सुषमा और सांस्कृतिक वैभव का वर्णन किया है वहीं पहाड की स्थिति और पहाडी लोगों के जीवन से जुडी कठिनाइयों का भी चित्रण किया है।

**प्राध्यापिका, सरकारी कालेज, तृप्पूणित्तुरा**

*(1) कविता में उत्तरांचल (आमुख): डा.गिरिजाशंकर त्रिवेदी*
*(2) कविता में उत्तरांचल : रिश्ता : मानवः पृ-२७*
*(3) उत्तरांचल - २, पृ-२०*
*(4) पहाड़ से बातचीत : पृ-२५*
*(5) रात में नैनीताल; पृ-४७*
*(6) पहाड़ की नियतिः पृ-६७*
*(7) यक्ष-प्रश्नः पृ-७६*

# देशभक्ति की तपन में है चरित्र बल का स्रोत

सिद्धेश्वर

**जिस** राष्ट्र में चरित्रबल नहीं होता, वह राष्ट्र अपनी रक्षा नहीं कर पाता। इसी तरह जो राष्ट्र आकंठ भ्रष्टाचार में डूबा रहता है और जिसकी सर्वाधिक आस्था चाटुकारिता पर रहती है, वह राष्ट्र अंततः समस्याओं के गंभीर दल-दल में धँस जाता है। हमारे देश की आज यही स्थिति है। भारतीय राजनीति और इस देश की प्रशासनिक व्यवस्था की स्थिति आज यह है कि इसमें एक ओर जहाँ चाटुकारिता और गणेश परिक्रमा को जमकर स्थान मिला है, वहीं दूसरी ओर राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन में योग्यता, दक्षता, कर्मठता एवं ईमानदारी के लिए कोई स्थान नहीं बचा। दरअसल भारत में समस्याएँ केवल व्यवस्था के स्तर पर ही नहीं हैं, बल्कि वे राष्ट्रीय जीवन के हर स्तर पर हैं और स्थिति दिनानुदिन तेज़ी से बिगड़ती चली जा रही है। इस देश का आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक ढाँचा दिन-ब-दिन खोखला होता जा रहा है। कारण कि हमारी कथनी और करनी में कोई सामंजस्य नहीं दिखता। इसी वजह से राष्ट्रीयता की भावना का भी बड़ी तेजी से देशवासियों में लोप होता जा रहा है। देशभक्ति नाम की चीज लोगों में देखने को नहीं मिलती। राष्ट्रीय चरित्र में ह्रास और भारतीय राजनीति की नैतिकता में गिरावट जिस तेजी से हो रही है वह किसी भी लोकतांत्रिक देश के लिए चिंता का विषय है और निश्चित रूप से इसके लिए राजनीतिक नेतृत्व और प्रशासन उत्तरदायी है। दूसरी बात यह है कि मौजूदा दौर में देश की जनता भी सो रही है और वह नेता और अभिनेता को ही अपना आदर्श मानने लगी है। जरूरत इस बात की है कि जनता के चरित्रबल में हो रही कमी को दूर किया जाए। आखिर जिस देश की जनता का चरित्र बल ही न हो, तो उनकी आपसी भावनाएँ कैसी जुड़ी रह सकती हैं। ऐसी स्थिति में तो उसे बाहरी ताकतों से ज्यादा अंदरूनी कमियों से डरना चाहिए। आज इस देश में जो आतंकवाद और नक्सलवाद का कहर है उसके पीछे भी हमारी अंदरूनी कमज़ोरी है।

ऐसा भी नहीं कि इस देश के लोगों अथवा यहाँ के राजनीतिक दलों में चरित्रवान, त्यागी, निष्ठावान तथा समर्पित कार्यकर्ता और नेता का अभाव है, मगर वे राजनीतिक अपराधीकरण के चलते नेपथ्य में चले गए हैं। उनकी कोई पुछ नहीं है, क्योंकि उनके स्थान पर बाहुबलियों, धनपशुओं, जातिबलियों तथा आपराधिक तत्वों का एकाधिकार और बोलबाला है तथा जनता भी उन्हीं को महिमामंडित कर रही है तथा समाज के ऐसे आपराधिक तत्व शासन-प्रशासन को ही नहीं, वरन् संपूर्ण समाज को कठपुतली की तरह नचा रहे हैं। सारा लोकतंत्र उनके विनाशकारी खेल से बैचैन तथा बेहाल है। भारतीय लोकतंत्र अपनी अंतिम सांस गिन रहा है। इस राजनीतिक प्रदूषणों के संक्रामक कीड़े हमारे सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा प्रशासनिक आदि अंगों-प्रत्यंगों में लग गए हैं, जिससे छुटकारा पाने की छटपटाहट तो है, पर नेतृत्व के अभाव में जनता आंदोलित नहीं हो पा रही है। प्रबुद्धजन भी तटस्थ हैं। मूकदर्शक हैं। आज चरित्र बल के अभाव में जब चारों ओर मूल्य-मर्यादाओं का विघटन हो रहा है, सेवा, समर्पण, आदर्श, त्याग जैसे शब्द या तो अपना अर्थ-खो बैठे हैं या अपनी संस्कृति खोते जा रहे हैं, संवेदनशील लोगों को आगे आना होगा तथा जन-चेतना जाग्रत करने का प्रयास करना होगा। उन्हें अपना मसीहा स्वयं बनना होगा।

मौजूदा दौर में चट्टान से टकराकर इस देश के व्यक्ति के पुरुषार्थ का प्रत्येक चेहरा चूर-चूर हो रहा है। साथ ही दर्शन, विज्ञान, मूल्य, नैतिकता तथा सभ्यता-सांस्कृति की उच्च उपलब्धियाँ सीमित और अप्रभावी होती जा रही हैं। संभवतः यह हमारे अहं का वृहत्त होता घेरा और चरित्र की शक्ति का अभाव का ही परिणाम है। इसके परिणामस्वरूप व्यक्तिवादी भावनाओं का सीमाविहीन जागरण स्वस्थ समाज और सबल राष्ट्र के निर्माण के लिए किए जा रहे प्रत्येक प्रयत्न विफल हो रहे हैं। दरअसल वैज्ञानिक सफलताओं ने हमारे जीवन में सुविधाओं का इतना विस्तार करना शुरु कर दिया है कि जल्द ही हमारी आवश्यकता, उपभोग-भोग में रूपांतरित हो रही है। हमने एक ऐसी दुनिया का निर्माण किया, जिसमें भौतिक साधनों ने हर कदम पर हमारा हाथ चूमना शुरु कर दिया है, प्रकृति से निकल कर हम एक तिलस्मी, दुनिया में पहुँच गए हैं। धूप-धूल और पसीनों को हम छोड़ते जा रहे हैं और अपने एकांत को आमोद-प्रमोद के असंख्य सितारों से रोशन कर रहे हैं। इस एकांत में संघर्ष और प्रतिद्वंद्विता की दुरुह ताकतें क्रियाशील हो रहीं हैं, जो हमें प्रेम और मैत्री के सहभाग में संयुक्त कर दे रहा है।

हलांकि यह भी सच है कि हमारे अस्तित्व में सहचित्तता का मौलिक आधार उपस्थित है, किंतु प्राकृत एकता पर भौतिक पार्थक्य का अवलेप इतना मोटा चढ़ गया है, अनियंत्रित भोगेच्छा ने हमें इस सीमा तक संज्ञा शून्य कर दिया है कि हमारी संवेदना कुंठित होकर प्रेम और मैत्री के अनमोल क्षणों का अनुभव लेने में अक्षम होकर रह गई है। परिवार, जाति, धर्म, राष्ट्र आदि से संबंधित अतिवादी भावनाएँ, इस मोद का ही परिणाम है, जो अंततः हिंसा का रूप लेकर बर्बरता का जन्म देती है। इसलिए ऐसे समाज में

हिंसा न केवल मानव-व्यवहार का प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज कराती है, बल्कि कितनी बार वह एक सामाजिक जरूरत का ख़ाल ओढ़कर प्रकट होती है। इनमें हमारे मोहजन्य स्वार्थ के बारूद धधकते हैं और यह सारा हृदय के बंजर मैदान पर लड़ा जाता है। आख़िर तभी तो आज इस देश में राष्ट्रीय चरित्र के संकट की समस्या भयावह हो गई है। प्रत्येक व्यक्ति का चरित्र राष्ट्रीय चरित्र का भूल आधार है। भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा की भी मान्यता रही है कि "ओछे चरित्र के लोग महान राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकते।"

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि राष्ट्र का प्रत्येक जीवन संकल्पित होना चाहिए जिसके लिए चरित्र बल का होना आवश्यक है। जब स्वयं में चरित्र बल होगा तभी जनमानस को टटोला जा सकता है, किंतु आज़ादी के इकसठ साल बीत जाने के बावजूद इस देश के अधिकतर लोगों का जीवन असंकल्पित और असंगठित है जिसकी वजह से वे लक्ष्यहीन हो रहे हैं। इस प्रकार देखा जाए तो संकल्प के बिना जीवन अधूरा है। इस संकल्प की नींब में राष्ट्रीयता, प्रतिबद्धता, नैतिकता और प्रमाणिकता का होना निहायत जरूरी है। राष्ट्रीय विचारधारा के पोषक होने के नाते राष्ट्र के जिन महापुरुषों ने आज़ादी के लिए संकल्प लिया अपने मन में ख़ुशहाल भारत का सपना संजोया और राष्ट्र कार्य के लिए अपने जीवन को न्योछाबर किया, क्या आज हम देशवासियों का यह पुनीत कर्त्तव्य नहीं बनता कि उनके विचारों का स्मरण कर उनके सपनों को साकार करने का हम संकल्प लें? मगर हाँ, इसके लिए हमें अपने चरित्र बल पर ध्यान देना होगा और इसके स्रोत को ढूँढ़ना होगा। देशभक्ति की वह तपन ही है जो चरित्रबल का स्रोत है जिसके लिए हमें प्रलोभनों से मुक्त और सुविचारों से युक्त होना होगा।

सामान्यतः प्रत्येक भारतीय हर बात में पश्चिम की ओर देखने का आदी हो गया है। कुछ भारततीय तो ऐसे हैं जिन्हें बात तभी समझ में आती है जब किसी चीज पर मेड इन इंग्लैंड, मेड इन यू.एस.ए. अथवा मेड इन जापान, रूस या जर्मनी की सील लगी होती है। यही नहीं उन्हें किसी बात पर तब तसल्ली होती जब उसे विदेशियों द्वारा कही जाती है। जबकि हमें यह मालूम होना चाहिए की अमेरिका तक में माना जाता है कि आधुनिक अमेरिका के चरित्र निर्माण में साहित्यकार हैनरी वड्र्सवर्थ, लॉगफेलो, आलित्रर वेजेल, होस्स, जोस्स रसेल लोकवेल आदि का अनुपम योगदान है। निःसंदेह पश्चिम में तो राष्ट्र निर्माण में साहित्यकार की भूमिका को महत्वपूर्ण माना जाता है, उन्हें सम्मान दिया जाता है, किंतु भारत की वैसी स्थिति नहीं है। यहाँ तो प्रेमचंद, फणीश्वरनाथ रेणु, निराला, महादेवी वर्मा तथा जयशंकर प्रसाद जैसे जाने-माने साहित्यकारों के स्मारक सही ढंग से बनाए ही नहीं गए हैं। और तो और भारतीय साहित्यकार तक उनको देखने जाने की जरूरत नहीं समझते हैं। इस सबके लिए भी सरकार पर पूरी निर्भरता है। आख़िर चरित्रबल का निर्माण हो तो कैसे? यहाँ तो साहित्यिक जगत की अधिकतर नामचीन हस्तियाँ भी "सीकरी सूर्य" की कृपा से चंद्रमा की तरह प्रकाशित हैं। फिर भी वे अपने भाषणों में बड़े गर्व से कहते सुने जाते हैं कि "संतन को कहा सीकरी सौं काम" कम ही साहित्यकार ऐसे मिलेंगे जिनको सीकरी से काम न हो। ऐसे साहित्यकारों की रचनाधर्मिता साहित्य के स्थान पर सत्ता प्रतिष्ठान अथवा दल विशेष के विचारोकों को प्रचारित-प्रसारित करने के लिए समर्पित रहती है, उनके साहित्य में समाज के लोकमंगल का लवलेश कतई नहीं होता। चरित्रबल का स्रोत ऐसे साहित्यकारों का सृजन नहीं हो सकता।

सदैव कुछ पाने की अभिलाषा में सत्ताभिमुखी ऐसे साहित्यकार अपना भला भले ही कर लें पर समाज व देश का भला कमी न कर सकेंगे और ना ही देशवासियों के चरित्र की शक्ति के स्रोत बन पाएँगे।

धरी की संवेदना उनकी अपनी होती है, धरती के पुत्र ही उनके बंधु-बांधव होते हैं, वे ही उनके प्रेरणा होते हैं, वे ही उनके आयाम भी होते हैं। और यह होता है उनकी संस्कृति, उनका आचरण, उनका व्यवहार, उनका परिवेश, उनका देश, उनका मानस। यह वही भारत देश है जिसमें वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, भास, बाणभट्ट, कबीर, सूर, तुलसी, पंत, प्रसाद, निराला, महादेवी, दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त हुए जो मरकर भी अमर हो गए, रोज हमको आपको जगाते हैं, राह दिखाते हैं, संकट से बचाते हैं और रातोदिन आसपास खड़े हैं, कहीं राष्ट्रचिंता, तो कहीं राष्ट्रीय प्रबोधन देकर हमें सचेत करते हैं अपनेपन के लिए, भारतीय होने के लिए, संस्कृति में जीने मरने के लिए और देशभक्ति की भावना भरने के लिए। इनका चिंतन संदेश विचार, दृष्टिकोण, घर से वन तक, झोपड़ी से महल तक, गरीब से अमीर तक, पंडित से मूरख तक, सब अपना होता है, भारत का होता है, भारत के लिए होता है, जागरण के लिए होता है और जगाने के लिए ही होता है। इसलिए आज जरूरत है स्वाभिमान के साथ देशाभिमान की और स्वाभिमान का आधार है स्वत्वबोध जिसके बिना किसी राष्ट्र की इयत्ता नहीं। कोई भी राष्ट्र स्वत्वबोध के बिना निर्जीव हो जाता है। स्वत्वबोध उसका प्राण है। भारतेंदु हरिश्चद्र ने इसी तत्व की ओर काफी पहले संकेत करते हुए कहा था - "स्वत्वनिज भारत गहै" आज स्वतंत्रता स्वयं प्रभा समुज्ज्वला बनकर हमारा आह्वान कर रही है राष्ट्र निर्माण के लिए, मनुष्य के चरित्र निर्माण के लिए।

**संपर्क: दृष्टि, यू-२०७, शकरपुर, विकासमार्ग, दिल्ली-९२, फोन-२२५३०६५२**

# निराला की दलित कहानियाँ

डॉ चन्द्रभान सिंह यादव

**हिन्दी** कथा साहित्य के इतिहास में निराला परम्परा और आधुनिकता के द्वन्द्व को मौलिक ढंग से प्रस्तुत करने वाले रचनाकार हैं। निराला के पद्य में स्वच्छदंतावाद और छायावाद का प्रभाव है तो गद्य में प्रगतिवाद और समाजवाद का। बंगाल के सांस्कृतिक वनजागरण का प्रभाव समूचे रचना संसार पर है। आपके काव्य-संघर्ष में आत्म-संघर्ष की झलक मिलती है तो कहानियों में सामाजिक संघर्ष की। निराला जी चतुरी चमार', 'अर्थ', 'भक्त और भगवान', 'हिरनी', 'श्यामा', 'देवी' कहानियों के माध्यम से दलित समाज के दर्द, असन्तोष और विद्रोह की भावना को व्यक्त किये हैं। गैरदलित लेखकों द्वारा दलित जीवन को आधार बनाकर लिखी गयी कहानियों में 'चतुरी चमार' का अद्वितीय स्थान है। दलित बस्ती का सटीक चित्रण करते हुए निराला जी लिखते हैं - 'जहां से होकर कई और मकानों के नीचे और ऊपर वाले पनालों का बरसात और दिन-रात का शुद्धाशुद्ध जल बहता है, ढाल से कुछ ऊँचे एक बग़ल चतुरी चमार का पुश्तैनी मकान है।' दलित समाज आज भी मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के लिए जूझ रहा है। जिसमें रोटी, कपड़ा और मकान मुख्य है। दलितों का आवास सदियों से गाँव के दक्षिण रहा है।

कहानी का नायक चतुरी जाति से चमार है। चमड़े से जूता बनाने के पैतृक व्यवसाय से जीवन यापन कर रहा है। इस व्यवसाय की कठिनायी और परेशानी को कहानिकार ने बख़ूबी चित्रित किया है। शिल्पी, श्रमिक और कारीगर हर युग में सामंतशाही व्यवस्था के शिकार होते रहे हैं। चतुरी भी इससे बच नहीं पाता है। चतुरी दुःखी होकर निराला जी से कहता है - 'काका जिमींदार के सिपाही को एक जोड़ा हर साल देना पड़ता है। एक जोड़ा भगतवा देता है, एक जोड़ा पंचमवा जब मेरा ही जोड़ा मजे में दो साल चलता है, तब ज्यादा लेकर कोई चमड़े की बरबादी क्यों करें?' सामंतीयुग में वस्तु संग्रह बाहुबल द्वारा किया जाता था तो आधुनिक युग में उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रसार पूँजीवाद द्वारा किया जा रहा है।

चतुरी न सिर्फ पैतृक व्यवसाय चमड़े के जूते बनाने को अपनाये हुए है बल्कि कबीरदास, सूरदास, तुलसीदास, पल्टूदास आदि के पदों का विशेषज्ञ भी है। इन पदों को गाने में वह लय, संगीत का ध्यान रखता है मगर महत्व अर्थ को देता है। चतुरी समय के परिवर्तन और भविष्य की आवश्यकता को समझता है। अपनी उम्र जता गाठते हुए बिता दिया परन्तु बेटे को नयी शिक्षा दिलाना चाहता है। इसके लिए निराला जी भी तैयार हैं। चतुरी एवं अन्य हरिजनों से मेलजोल रखने के कारण निराला जी 'ब्राह्मण समाज में ज्यों अछूत' हो गये। निराला जी का बेटा चतुरी के बेटे के साथ गुरु-शिष्य ही नहीं बल्कि सहपाठी का भी सम्बन्ध रखता है।

स्वाधीना संघर्ष के दौर में दलितों का विद्रोह आज की तरह मुखर नहीं था। मगर उनके जीवन में कष्ट और दिल में कशमश थी। जिसको समझने और पहचाने का कार्य निराला जी कर रहे थे। चतुरी चमार के लिए निराला जी का कथन है - 'मैं उसके मनोविकार को पढ़ने लगा-वह एक ऐसे जाल में फँसा है, जिसे वह काटना चाहता है, भीतर से उसका पूरा जोर उमड़ रहा है, पर एक कमज़ोरी है, जिसमें बार-बार उलझकर रह जाता है।' दलित जो कहता है और जो करता है उसे तो लेखकों ने लिखा मगर निराला जी दलितों के अन्तर्द्वन्द्व को भी अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। इस प्रकार अन्य दलित रचनाकारों से एक कदम जागे बढ़ जाते हैं। 'चतुरी चमार' दलित जीवन की मात्र गाथा ही नहीं बल्कि अवध के सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन का रिपोर्ताज है। यह निराला की महानता है कि उन्होंने इसके लिए चतुरी चमार को आधार बनाया।

'देवी' कहानी की नायिका एक पागल महिला है जो जाति से दलित है या नहीं इसमें सन्देह है मगर वह दरिद्र है। उसके धर्म को लेकर लोग आपस में चर्चा करते है मगर जाति की चर्चा नहीं होती है। आज स्त्री-विमर्श के केन्द्र में ज्यादातर उच्च मध्यवर्गीय, शिक्षित और महानगरीय महिलाएं हैं। आज़ादी से पूर्व शायद ही कोई कहानीकार हो जिसने कहानी की मुख्य पात्र पागल

महिला को स्वीकार किया हो। औपनिवेशिक भारत में आज जैसी जनतन्त्रतात्मक सोच नहीं थी। इसलिए निराला की ये कहानियाँ और भी महत्वपूर्ण हो जाती हैं। निराला समाज व्यवस्था पर व्यंग्य करते हैं तो ख़ुद पर आत्म व्यंग्य। यह पगली भी तथाकथित सभ्य समाज का एक हिस्सा है। सुसंकृत समाज और पगली के सम्बन्ध को निराला जी बारम्बार व्यख्यायित करते हैं - 'मेरी बड़प्पन वाली भावना को इस स्त्री के भाव ने पूरा-पूरा परास्त कर दिया। मैं बडा भी हो जाऊँ, मगर इस स्त्री के लिए कोई उम्मीद नहीं इसकी किस्मत पलट नहीं सकती... सहते-सहते अब दुःख का अस्तित्व इसके पास न होगा।' किसी शायर ने लिखा है कि 'दर्द से कुछ इस तरह नाता रहा/ कि दर्द का अहसास ही जाता रहा।' 'देवी' कहानी में निराला द्वारा पगली के बेबसी और दरिद्रता का जो चित्रण है वह अद्वितीय है। इस कहानी में असहाय लोगों के प्रति सभ्य समाज के अमानवीय दृष्टिकोण को व्यक्त किया गया है।

निराला जी द्वारा विरचित श्यामा कहानी की नायिका श्यामा जाति से लोध है। वर्तमान में यह जाति उत्तर प्रदेश के अन्य पिछड़ा वर्ग में आती है। आम की रखवाली करते समय श्यामा की मुलाकात बंकिम से होती है। श्यामा बड़ी शालीनता और दीनता से कहती है कि 'तुम कहो दो इधर के आम बीन लूँ।' यहीं से उत्पन्न होती है स्नेह और सहयोग की कहानी। यह कहानी दलित-स्त्री की दयनीय दशा को ही नहीं व्यक्त करती बल्कि किसानों का शोषण और सामंती व्यवस्था के अत्याचार को भी अभिव्यक्ति प्रदान करती है। लगान न जमा करने के कारण श्यामा के पिता सधुआ को जमींदार के कारिंदे पकड़ कर ले जाते हैं और बेरहमी से पिटाई करते हैं। सधुआ लोध को बचाने के लिए ब्राह्मण बंकिम अपनी अंगूठी को गिरवी रखता है। पिटाई के बाद सधुआ कमज़ोर और बीमार हो जाता है। उसकी सेवा और सुश्रूषा में बंकिम और श्यामा एक-दूसरे के करीब आते है। दोनों अलग-अलग वर्ण और जाति के हैं इसलिए समाज व्यवस्था के नियन्ताओं को यह बात असह्य लगती है।

कहानी में अनेक स्थानों पर ऐसा लगता है कि निराला जी जमींदारी व्यवस्था के उत्पीड़न का आँखों देखा हाल प्रस्तुत कर रहे हैं - 'तब तक सधुआ की सब दशा हो चुकी थी। बेंत की मार से उसकी पीठ फट चुकी थी। नीम के पेड़ के नीचे बेहोश होकर मुँह के बल पड़ा था। मुश्कें बँधी थी।' जमींदारी व्यवस्था का आतंक यही तक नहीं रहता बल्कि एक कदम आगे बढ़कर सधुआ को जाति से बाहर निकालने का षड्यन्त्र भी रचा जाता है। जमींदारी और पुरोहिती व्यवस्था द्वारा गाँव में चलने वाले साझा षड्यन्त्र से निराला जी पर्दा हटा देते हैं। पंडित देवीदयाल के आतंक से सधुआ के स्वजातीय उसका साथ देने के बजाय हुक्का पानी बन्द कर देते हैं। दलितों की दयनीय दशा के साथ उनके स्वाभिमान को भी बड़े ही सलीके के साथ चित्रित किया गया है। इस सलीके में दलितों का आक्रोश भी दबा है। लखुआ पंडित देवीदयाल की आँखों से आँख मिलाकर सुनाता है - 'हम बाँभन नहीं हैं जो कुरमी-काछी, तेली-तमोली, सबकी पूरियों में पहुँच पेल दे। हम हैं लोध-लोध का बच्चा कभी न कच्चा।' कहानी में एक बात और गौर करने लायक है कि निराला जी निबन्धों में जो दलित और गैरदलित के बीच वैवाहिक सम्बन्ध का विचार रखा उसे मूर्त रूप में प्रस्तुत किया है।

ये कहानियाँ कहानी कला के परम्परागत ढांचे को तोड़ती हैं। यहां दलितों के शोषण का चित्र सशक्त है। निराला की दलित जीवन से सम्बन्धित कहानियों के विषय में विवेक निराला का कहना है कि - 'इन कहानियों में दलित अपने सम्पूर्ण उत्पीड़न के साथ मौजूद हैं। इन दलितों में से कुछ सामंत विरोधी प्रखर जनवादी चेतना के साथ लड़ने की हिम्मत रखते हैं तो कुछ शोषण से त्रस्त, मर खप जाते हैं।' निराला जी के सामाजिक क्रान्ति का तरीका निराला था। उनकी क्रान्ति मात्र साहित्यिक नहीं अपितु जीवनानुभव से उपजी और जमीन से जुड़ी थी। निराला चाहते थे कि दलित अपने अधिकारों के प्रति ख़ुद जागरुक हो। समाज में सम्मान पाने के लिए दलित को घर से बाहर निकलकर संघर्ष करना होगा। यह निराला का मात्र विचार नहीं बल्कि उनके दलित पात्रों का चरित्र भी है।

**वरिष्ठ प्रवक्ता, हिन्दी विभाग,**
**के.जि.के.(पी.जि.) कॉलेज, मुरादाबाद (उ.प्र.)**

# ब्रह्मज्ञानी-साहित्यों के आत्मतत्व!

शिवराज प्रधान

**नमस्तक** पावन चरण स्पर्श!

(घर में रहते अजनबी सा हो गया हैं।
अपने ही उस शहर में मैं ख्रो गया हूं।
क्षेत्र जैसे थे कभी है अब भी वैसे
एक मैं ही हूं, जो ऐसा हो गया हूं।)

शेक्सपियर के ओथेलो में जब ओथेलो डेसडेमिनो को हत्या कर बैठता है, तो उनके आत्मिक इन्द्र से फूटे पश्चाताप की पक्तियां गुंजता है - आगर संसार की उपलब्ध सभी सावन से भी ले डेसडेमिनो के हत्या से रक्त रञ्जित हाथों को धो लूं, तो भी ये रक्त साफ नहीं होगी। मेरी भी दशा ओथेली से कम नहीं लगता है, जब प्रथमतः वरस भर घर से बाहर रहना गध्य हुआ, और साथ में आपने द्वारा भोजी गयी अमूल्य निधि (महाकाव्य) चिरंजीव एक दोस्त ने अवलोकनार्थ। मनानार्थ ले तो गया, लेकिन उनके घर में भाग लगने की बजह से, दोस्त के घर में ही चिरंजीव (महाकाव्य) के प्रति भी जलकर राख ही गया। सो मैं असमजस में बैठकर पश्चताप में झुलसता रहा। ब्रह्मवेता पुरुष, आपको घटना सम्बन्धी लिख्र व नहीं। To be or Not to be (Shakespear) के असमजस स्थिति में जकड से मैं ओथेला का गणी पश्चताप के हरके दुहराता रहो। आगे, मेरा घर में बाहर रहना दूसरी समस्या बन पड़ी।

मैं स्वीकार करता हूँ में जो घटना घटी-पुस्तक, चिरजीव (महाकाव्य) के आग में जल जाना-अक्षम्य भूल है। परन्तू ब्रहल पुरुष, उदार हृदय के समक्ष मुझ जैसा आपके पाव के चरण धूल पाठक की समाधान करना - ईश्वरीय गुण। सो मैं सुह पाठक, आपके चरण ले बैठकर प्रार्थना करूँ कि आप मुझे समाधान देकर आप ईश्वरीय गुण का परिचय दें! मुझे पूर्ण विश्वास है आप मेरी भूल क्षमा कर देंगे।

जो भी हो, चिरजीव (महाकाव्य) का सठकि स्थान रामायण। महाभारत के साथ संतोकर मन्दिरों में पठी जानी चाहिये। ये इतनी दिव्य स्वरों में आलोकित होके है कि मात्र पवित्र स्थानों में चिरजीव का सही स्थान होनी चाहिये - "मैं अपनी सैयाँ सँग साँची" (मीराबाई) I am there to my Lord... भाग्यवश, मैं चिरंजीव की एक बार ही पढ पाया, जो कि मुझ जैसा क्षुद्र पाठक के लिये महाकाव्य का गुण सार समक्त पाना नामूमाकिन ही नहीं अनुभव भी था। सो मेरी सरसरी मनन में, मेरी सीमित ज्ञान के समक्त में, जो जान पाया उससे ही दी। तीन हरको में बोलने का शिशु प्रयास है - यहाँ!

आपकी महाकन लेख्रनी, जो कि अवधूत के पलकें फटकने की ऊँची श्रृंगार को सुक्ष्म भाव से पकड़ने अद्भुत समता रख्रता है और दिव्य संदेश होने की स्वर व कृष्ण स्वर बिख्रेरता है, वह शरीर ही नहीं बल्कि आत्मतत्वों को सार में पूरी परिवर्तन का सच बोलता है - "स तो बुद्या शुभचा संयुनक" (श्वेताश्वतरोपनिषद; तृतीय अध्यायः९८) (हम शुद्ध बुद्धि से जोडे). साथ से सात चिरजीवों की शौर्यता बलिदान, साधता (तपस्या), भक्तिभाव, उदारता के दिव्य गाथाओं को जिस व्याख्या स्वर से सज्जित किया गया है वो आज के युग के ही नही बल्कि आनेवाली कल की सन्तति को एक दिशा/दिशाएं निर्धारण करके अग्रसर होने को परमतत्व को उजागार करता है। चिरजीव के सातों चारित्रोकं में नव सिर्जना का शुभ संकेत आप्लावित मिलता है। जबकि हनुमान की भक्तिरस अपने आप में अभूतपूर्ण स्वर कण्ठ है। अलौकिक भक्ति धारा का प्रवाह-

राम मिलण के काज सख्री
मेरे आरती उरमें जागीरी!
तड़कत तड़कत कल न परत है
विरहबाण हर लागी री! (मीराबाई के भजन)

मैं अपनी सैयाँ संग साँची/अब काहे की लाज सतनी, परगट हो नाची/दिवस भूख्र नहीं चैन होय कबह, नदी निसी नासी/वैध बार को पार ही गयी, ज्ञान गुण गाँसी/ (मीराबाई के भजन)

'चिरजीव' महाकाव्य में आपने आत्मा में प्रवाहित अमृत रस का अक्षुण्ण स्वाद को एक अत्याम में खड़ा करके अपनी ही स्वर में साधवें इन्द्र में बाँधने का अभूतपूर्व सफल प्रयास किये है, जो कि आत्म चिन्तन के घडी में झूमले हुए एक साधक का रूप प्रेषित करता है-पुर्नजागरण में भाव विभोर हो पड़ता है - "प्रथम भी वहीं है, अन्त भी और बाह्यरूप, अन्तरूप भी वही है-वही सर्वज्ञाना है।" (पवित्र कुरीन), ये सर्वज्ञाता रूप का एक अलग लक्ष्य में कृतिकार फिर शुभ

संकेत देता है कि आत्मा के निनाद से दोबारा नई सिर्जना सुर खड़ा करता है। तो आपके विशिष्ठ कलम की स्वर है, जो इतनी कुशलता, कौशलता, सुत्य भाव और दार्शनिक रंग से ये सूत्र को जोड़ में प्रदर्शन किये है, वो अतुलनीय है। अभूतपूर्व है। जैसे कि पवित्र बाहुबल के भजन संहिता (Psalm) में आत्मिक छंद की स्वर तत्व में, आत्मिक आनन्दोल्लास में, नई सिर्जना के स्वर गुञ्जित करता है - The Lord is my shepherd; I shall not want. He restores my soul (Psalm 23:1).

एक बार हालीवुड के सुप्रसिद्ध अभिनेता मार्लन ब्राण्डो को एक आर्न्तवार्ता में पूछा गया कि आपको अभिनय करना कैसा प्रतीत होता है? तो मानौन ब्राण्डो (तब उनकी उम्र अस्सी बरस के थे) ने तपाक से जवाब दिया "बच्चों का खेल सा लगता है।" लेकिन मार्लिन बाण्डो को बच्चा होना अस्सी वर्ष लग गया है। और मुक्त इस साहित्यिक मनीषी के महाकाव्य के ऊपर दो हरकें लिखने की प्रायः साठ वर्ष लगा। तात्पर्य ये है कि आप के महान चरण तले आनेको व अपनी सीमित ज्ञान के दायरे को बढ़ाकर आप के चरणस्पर्श करने को आधा शताब्दी पार करके आना हुआ।

अति विचित्र रघुपति चरित्र ज्ञानहि चरम सुजान।
जे मतिमंद विमोह बस हृदयैं धरहि कह आन।
(श्री तुलसीदास रामचरितमानस)

शब्द सुनत मेरी हातियां कौपे, मीठे लोग बनि।
एक हकटकी पंघ निहारूं भछ ईमासी रैन।
(मीराबाई के भजन)

(चूँ, एक प्रकार से मैं आत्मिक ऊचाई की चढाव में ब्रह्म रुप की संरचना में दुसाध्य व कठिन, साधना से विचलित हो पूझे की घडियों में द्वन्दरत रहा। व चूं कहे कि दिव्य गाया के अनमोल घडियों में कंधी पूर्णरुपेण आलोकित न हो पाने की अन्तर पीड़ा में क्रन्दन से विह्वल रहा।)

चिरजीव महाकाव्य के एक और कड़ी है, जो सिलासिलेवार में कृतिकार के अपनी लेखनी से उजागार करने की सफल प्रयास किये है, और सफल भी हुए हैं, और वो है महान चरित्र के मूल स्वर के प्रतिनिधित्व, जो कि इतिहास/समाज में शौर्यता, वीरता, बलिदान, त्याग, क्षमाशीलता, उदारता, ईश्वरीय गुण, दिव्य ज्ञान आदि के विशिष्ठ रंग चढाके एक अध्याय, गढ़ता है - वो अध्याय को महान (दिव्य) चरित्री को घटाओं में जन कल्याण के, युग मंथन के, व आमूल परिवर्तन के उदाहरणीय संदेश प्लावित रहता है-कृतिकार ने सात चिरजीवों के दिव्य गाथाओं के सर्ग में अपनी भक्तवत्सलता के ऊँची स्वर से भूतल में खडे होकर प्रतिनिधित्व का गहन व्याख्या भी प्रस्तुत किया है - नो कि हमारे सद्गुण, सच्चरित्र, पवित्रता, सहविचार, सत्संग आदि आदि में स्पष्ट रूप में ऊच्चारित हीता है। और कृतिकार के व्याख्या चिन्तन में ब्रह्माण्ड सञ्ज्ञा। (Beautitude or Cosmic Clause) के एक चार को बोल दिया है-

"न हि ज्ञानेन सदृश पवित्रमिह विघते
तत्स्वयं योग संस्द्धिः कालेनात्मनि विन्दति (गीता ८.३०)

(इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करनेवाला कुछ भी नहीं है....)

अन्त में चिरंजीव महाकाव्य के महान कृति के सम्बन्ध में इतना ही कहूँ कि थे ब्रह्मज्ञान का तत्वबोध उद्घाटन है। (Revealation of Immortal Lines In Our version or passing to Minitest silence). वस्तुतः चिरजीव महाकाव्य का समीक्षा से बढ़कर शहरी अध्ययन करने की सच ही मान्य होगा-मेरी राय में।

आगे मुझे बहुत दुःख हुई कि आप के एक मात्र पुत्र किसी दुर्घटना में गुजर गये। ये ईश्वरीय लीला की शायद ही कोई समझ पाये, कि ये नश्वर संसार कितनी अस्थायी है-कितनी निर्बल। में ईश्वर से प्रार्थना करूँ कि महान आत्मा को ईश्वर स्वर्ग में जगह दे - और स्वर्ग में हर्षध्वनि के बीच किरतिमान रहे। और आपको - आपके परिवार की ईश्वर, इस दुःखद घड़ी में साथ दें। ईश्वर ने दुःखद घड़ी को पार करने में आर्शीवाद की बरसा करें। आपके शोक संतप्त परिवार के साथ मेरी हार्दिक समवेदना है। आपके पत्रिका विशेषांक निकाल रहे है - एक ऐतिहासिक यादगार बनें।

और एक बार फिर आपसे माफी (क्षमा) माँगूं कि चिरंजीव महाकाव्य आग में जलकर नष्ट हुआ, लो भी आपकी पुण्य आर्शीवाद, स्नेह, सौहार्दता मेरे साथ आजीवन है और रहेगी। और चिरंजीव महाकाव्य की दूसरी प्रति नहीं भेजिएगा - मात्र आप मुझे नित्य आर्शीवाद दें। उमगे घर से बाहर रहने को वजह से मेरी अंग्रेजी पत्रिका बन्द पड़ा है - सब दिन के लिए। और प्रायः घर से ज्यादातर बाहर ही रहना पड़े कह नहीं सकता। ईश्वर आपको सुखास्थ्य रखें। दीर्घजीवी रखें। आप उमर रहे।

शुभेच्छु।

**शिवराज प्रधान**

# बुद्धिमानी (लघुकथा)

**डा. वी.गोविन्द शेनाय**

बब्लूजी लोकसेवा आयोग की परीक्षा में प्रथम आये। सोचा था, नियुक्ति कलेक्टर के पद पर होगी। परन्तु नियुक्ति डिप्टी कलेक्टर के पद पर हुई। हताश नहीं हुए। महत्वाकांक्षा विरासत में मिली थी; चतुराई भी। पिता साहूकार के यहाँ मुनीम थे। साहुकार के निधन पर उनके वारिस से साझेदारी में कारोबार करके स्वर्य साहूकार बन बैठे थे। पिता की सीख थी, नाम दाम का ध्यान रखो; पद के साथ अर्थ भी हो, वही सार्थक पद है। दौड में पीछे नहीं रहो और पुत्र आगे ही रहा। तीन ही वर्षों में वह सचिव का पद प्राप्त करने में सफल हुआ। पिता निहाल हो उठे। विवाह कराया सम्पन्न और प्रतिष्ठित परिवार की अकेली संतान से। सचिव क्या हुए, आयोग और शिष्ट मंडलों से संबंध जुडा और समान धर्मा लोगों के साथ विदेश यात्राएं कीं और ज्ञान भंडा। रसमृद्ध किया। व्यस्तता नशा सी छा गयी थी। बब्लू ने आम्सट्रडैम में आयोजित प्रशासन नवीकरण संगोष्ठी में भाग लिया और बाज़ार जा जरूरी और महत्वपूर्ण चीज़ें ख़रीदीं और हवाई यात्रा से देश लौटे। घर पहुँचे तो रात गहरा गई थी। नौकर ने सूचना दी कि पत्नी प्रसव केलिए अस्पताल में भरती हुई है। बब्लूजी ने दैनिकी देखी, फिर डाक और अगले दिन के कार्यक्रम में संशोधन किया। दो आयोगों की बैठक एक ही दिन, आयकरवालों का पत्र आया था, जवाब देना अत्यावश्यक था, जाँच ब्यूरोंवालसों से भी निपटना था। प्रातः काल बब्लूजी नित्यकर्म संफुर्ती से निपटे और बांगडू रस्त्राँ जा नाशता किया और सीधे दफ्तर गये। सोचा, दफ्तर के अत्यावश्यक कार्यों से निपटकर बाद में अस्पताल से फोन पर बात करेंगे। उन्होंने अस्पाल से बात नहीं की; दफ्तर के कार्यों से निपट कर शाम को अस्पताल गये। देखा, पत्नी ने बच्चे को जन्म दिया है। सब मंगलमय। मन ही मन अपनी बुद्धिमानी को सराहा। उधर पत्नी के मुँह से बोल ही नहीं फूटा।

**सौभाग्या, औल्लूकरा, त्रिचूर**

# कवि स्वदेश भारती के सम्मान में कार्यक्रम आयोजित

हैदराबाद् ३१ जुलाई (स्वतंत्र वार्ता)। गीत चांदनी और गोलकोंडा दर्पण विचार मंच, हैदराबाद के संयुक्त तत्वावधान में हिंदी के अंतर्राष्ट्रीय कवि, उपन्यासकार, संस्थापक अध्यक्ष राष्ट्रीय हिंदी अकादमी, कलकता स्वदेश भारती के नगरागमन् पर पंडित नरेंद्र भवन, राजमोहल्ला में एक शाम स्वदेश भारती के नाम कार्यक्रम का आयोजन किया गया। स्वतंत्र वार्ता के संपादक डॉ. राधेश्याम शुक्ल की अध्यक्षता तथा वरिष्ठ कवि नेहपाल सिंह वर्मा के संचालन में आयोजित कार्यक्रम में संयोजक गोविंद अक्षय ने स्वागत भाषण प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि स्वदेश भारती रूपांबरा के संपादक हैं और अज्ञेय द्वारा संपादित तार सप्तक-चार के प्रतिनिधि कवि हैं। स्वदेश भारती ने आज की कविता में नव प्रवाह विषय पर चर्चा करते हुए कहा कि जो कविता संप्रेषित नहीं होती, वह अपना प्रभाव नष्ट कर देती है। कविता का धर्म समाज को जागृत करना है और कवि का कर्म चिंतन को शब्दों में ढालना है। आज की कविता में विघटनवादी तत्व और गिरोहबंदी का प्रवेश हो गया है। यदि समय रहते इसे न रोका जाए, तो अगले २० वर्षों में कविता का पतन आरंभ हो जाएगा।

डॉ. राधेश्याम शुक्ल ने कहा कि आज रचनाकार कम और समीक्षक अधिक हैं। आलोचना के मानदंड बदल गये हैं। उन्होंने कहा कि कविता सामाजिक परिवर्तन के लिए माध्यम होती है। नित्य लेखन से शिल्प तथा भाषा में सुधार संभव है, परंतु कविता के लिए नित्य चिंतन आवश्यक है। नये परिवर्तन में सौंदर्य की तलाश होनी चाहिए। इस अवसर पर संपन्न कवि गोष्ठी में उपरोक्त महानुभवों के अलावा डॉ.दयाकृष्ण गोयल, भगवान दास जोपट, रलकला मिश्रा, विनीता शर्मा, एस.के.जैन, लौंगपुरिया, सुषमा बैद, आशा खंडेलवाल ने काव्य पाठ किया। स्वदेश भारती ने हैदराबाद के रचनाकारों को अपनी नवीन पुस्तकों का सेट भेंट किया और उन्हें कलकत्ता में आयोजित होने वाले नक्सली समस्या पर आधारित उपन्यास के लोकार्पण महोत्सव में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया। संयोजिका रत्नकला मिश्रा ने धन्यवाद प्रस्तुत किया।

## लेखक परिचय : डा. के.सी.अजयकुमार

डॉ. के.सी.अजयकुमार का जन्म १९६४ में केरल के पत्तनंतिट्टा में हुआ। आपने हिन्दी में स्नातकोत्तर की उपाधि ली। लेकिन डॉ.कुमार मलयालम के प्रख्यात साहित्यकार हैं। सूर्य गायत्री इनके मलयालम उपन्यास मृत्युञ्जयम् का सरल हिन्दी रुपान्दरण है। इन्हें अनेक साहित्यिक पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं।

## पुस्तक परिचय

**सूर्य गायत्री सत्यवान-सावित्री की पौराणिक कथा** पर आधारित एक रोचक उपन्यास है। परंतु यह कथा पौराणिक की अपेक्षा वैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित है। इसीलिए कहा जा सकता है कि इस पौराणिक कथा को विज्ञान की कसौटी पर कसने का प्रयास किया गया है। विज्ञान में नित नए अनुसंधान हो रहे हैं, और वैज्ञानिक मृत्यु पर विजय पाने की भरपूर कोशिश कर रहे हैं। एक तरफ़ जहां वैज्ञानिक मृत्यु पर विजय पाने की भरपूर कोशिश पर रहे हैं। फिर दूसरी तरफ़ इस बात पर भला कौच विचार करने से इंकार कर सका है कि क्या अकाल मृत्यु को रोका नहीं जा सकता? विज्ञान अकाल मृत्यु रोके या नहीं, परंतु भारतीय नारी सावित्री ने अकाल मृत्यु को रोककर विधि के विधान को अवश्य चुनौती दी थी।

# वस्तुस्थिति

**आचार्य भगवानदेव, सुन्दरनगर**

उपवन के आंगन से
पुष्प सभी लापता है
बसन्त के मौसम में भी
घुटन है
चुप्पी है
सन्नाटा है
अच्छी पैदाईश से उत्साहित
धरती पर पापों की खेती करना
अब सबको बेहद सार्थक लगने लगा है...
हवा और प्रदूषण की
मित्रता हो गई है।
बादलों ने सूखे से
समझौता कर लिया है।
कुछ अनुबन्धित शर्तों पर
सांप और नेवला एक हो गए हैं।
सत्य निर्वासित है
भ्रष्टाचार पल्लवि-पुष्पित है
धर्म पाखण्डी गुरूओं के शरण में जाकर
सुविधाभोगी हो गया है
कर्म चालाकी का पर्याय बन गया है
निष्ठाएं अवसरवादी
और आस्थाएं पलायनवादी बन गई है।

# ऐसे लोग

**रपाल अपुष, मुज़ाफर नगर**

जो दूसरों के हलक में से
निवाला छीनने को तत्पर हैं
वे भला
पसीना बहाने वालों के हाथों तक
रोटी कैसे पहुँचने देंगे!
ऐसे लोगों की करत क्या पूछते हो
जो दूसरों को झाड़ पर चढ़ाकर
इस प्रकार ताली पीटकर हँसते हैं
जैसे विश्वामित्र को
मेनका के पाश में फँसाकर
देवता हँस रहे हों।
ऐसे लोग ख्याल पतोरने में उस्ताद
पैखड़ा भरने में निष्णात
आताल-पाताल बोलने में ऐसे कि
पूनम को मावस कर दें
इनकी नियत इतनी माड़ी कि
दूसरों को बचूरकर खाने के चक्कर में
रहते हैं सारा दिन।

---

श्रेय निर्वासित
प्रेय चर्चित है,
भीष्म का पराक्रम
शिखण्डियों को समर्पित है।

# स्मृति

**प्रमोद पुष्कर, भोपाल**

एक स्मृति जब तुम्हारी प्राण मेरा भोग लाया
हो सकी विस्मृत नहीं जो औ तेरा उन्माद छाया (एक स्मृति...)
श्वास में पदचाप उसका सुन हृदय जब डोलता है
रात उसका मोल करती प्रातः उसको तोलता है
मोल उसका था न संभव दिवस ने आकर बताया (एक स्मृति...)
मैं जली विरहाग्नि में जब पहिन कर अंगारमाला
जलन का विक्षेप लेकिन वो बडा ही था निराला
हो गई अभिभूत मैं जब इक नया एहसास पाया (एक स्मृति...)
हो बृहद का एक लघु से तुम कहो किस भाँति परिचय
आँसुओं से प्यार का तेरे करूँ क्या बोल विनिमय
शेष सब कुछ भी नहीं है श्रेष्ठतम सब कुछ गँवाया (एक स्मृति...)

## पाठकीय प्रतिक्रिया

**29-4-2010**

**पूज्य भाई, नमस्कार!**

**आज शरत्चन्द्र विशेषांक मिला। धन्यवाद। आपका पुत्र इतने ऊँचे उठकर अचानक संसार से गायब हो जाना अचरज होता है। उसका त्यागशील जीवन अनुकरणीय है। इतनी छोटी उम्र में हिन्दी के साथ अन्य बहुत सराहनीय और प्रशंसनीय कार्य किया जो अविस्मरणीय है। परिवार के साथ उनकी संवेदना भी देखने लायक है।**

**भगवान ने इतनी कम उम्र में उसे अपना लिया, यह भगवान का ही कार्य है, भगवान ऐसे व्यक्ति की खोज में रहता है जिसे सब पसन्द करते हैं, उसे भगवान भी पसन्द करता है, और निष्ठूरता से उसे बुला लेता है। माता पिता के लिए तो पुत्र शोक से बढ़कर दूसरा कोई शोक ही नहीं होता, आप पति-पत्नी इस बुढ़ापे में पुत्र सामीप्य से वंचित होने पर आप की बुद्धि कुंठित होना स्वाभाविक है आपको कुछ भी समझाते हुए हमारे गला भरा जाता है। धन्य है स्व. शरत्चन्द्र की माँ को नमस्कार बताइये। आप पूरे परिवार के साथ मेरी हार्दिक समवेदना और सहानुभूति।**

**भगवान दिवंगत आत्मा को चिर शांति प्रदान कर आप परिवार को यह अपार दुःख सहने की शक्ति प्रदान करें।**

**आपकी बहन, बी.एस. शांताबाई, प्रधान सचिव,**
**कर्णाटक महिला हिन्दी सेवासमिति, बेंगलोर-१८**

# जड़-चेतन

**विजय एन, फैजाबाद (उ.प्र.)**

तर्क की कसौटी पर/कौन भला
मान पाएगा/वृक्ष को मात्र एक जड़?
आप मानें तो मानें / मैं नहीं मानता।।

इसलिए नहीं कि/सुनी जा चुकी है
पोटेन्टोमीटर - पॉलीग्राफ द्वारा
वृक्षों के हँसने-रोने की आवाज़।
इसलिए भी नहीं/कि
जैवकीय गुण-श्वसन...भोजन...उत्सर्जन...
पुनर्निर्माण;
वृक्ष में है विद्यमान।
वरन् इसलिए/कि/वस्तुतः वृक्ष ही हैं
चैतन्य, विकासशील जीवन की जीवन्त
पहचान।।
देखो/हमारे बहुलांश भौतिक प्रपंच है जहाँ
न्यस्त स्वार्थों के घर्षण-मर्षण
करते हैं वृक्ष वहीं/निरासक्त भाव से
परहित साधना... प्रदूषण-निवारण
रोकते हैं ये/बस चले जहाँ तक/दूर-दूर तक
मिट्टी का अपक्षरण-अपसरण।।

विकास-विलास के नाम/करते हम जहाँ
ऊर्जा-संहति का मात्र अन्तः-अंतरण
किसी से कुछ लेकर/कुछ खोकर
अटक-भटक कर/इधर-उधर
करके किसी न किसी को दर-ब-दर

वहीं; आजीवन/छूने को उद्यत आकाश
वृक्ष का निरन्तर प्रस्तार
होता है अपनी धरती से जुड़ कर!
बिन किए किसी को बेघर;
प्रत्युत, देकर/सभी को उन्मुक्त
शाखों-टहनियों-पत्तियों का निश्छल नेहांगन!!
वृक्ष देते हैं बहुतों को
घर से बढ़ कर अनिवर्चनीय घर!!

जाने-अनजाने/चाहे-अनचाहे
करते हैं हम/अनेक अवचार
करने को अपने मनोरथ सफल

# हिंसामुक्त भारत

**आर. राजपुष्पम, त्रिवेंद्रम-१०**

हिंसा मुक्त भारत
हमारा स्वप्न है
हिंसामुक्त भारत
हमारा लक्ष्य है
हिंसा ने ही बापूजी की जान ली
हिंसा मुक्त भारत हमारा कर्म है।

आओ आओ भाईयो बहनो
मिलके चलें मिलके चलें
इस पुण्य काम में हम भाग लें
हिंसामुक्त भारत बना लें।

अहिंसा का क्षेत्र तो विशाल
सारी दुनिया की शान्ति का धाम
अहिंसा ही खुद ईश्वर है
इसी पर है निर्भर मानव-कल्याण

---

सिद्ध होते हम अक्सर/निरीह...लाचार
वहीं; बाँटते रहते वृक्ष सर्वदा
अप्रतिम गन्ध...अप्रतिम फल...हजार
उपचार/उपकार!!
जीवन्त प्राणवायु, अविकल सुख के
सतत् प्रदाता हैं ये
बिना किसी याचना/अभिलाषा के

तब... हाँ! त....ब,
अपनी मिट्टी से जुड़ाव/यति गति...
निरन्तर प्रगति
बिना पहुँचाए किसी को क्षति/सतत्
विकास/सुधार
बिना प्रतिदान के निष्कलुष प्रदान/त्याग
अपरिग्रह,
लोकमांगल्य की साधना का साकार प्रतिमान;
क्या नहीं हैं ये/लक्षण चरम चेतना के???
फिर भ... ला/ क्यों मानते हैं आप
वृक्षों को मात्र जड़???
आप मानें तो मानें....मैं नहीं मानता!!!

# बस इतना पाथेय

**राम स्नेही लाल शर्मा, यायावर**

गजरा, फूल, चूड़ियां, चुम्बन
तृषित अधर, आकुल आलिंगन
एक जन्म के लिए बहुत है
बस इतना पाथेय
प्राण-प्राण का मिलन हुआ
वह अद्‌भत था रस का सम्मोहन
अधरों का वह मौन जगा जब
नस-नस में सोया वृन्दावन
बिना मंत्र सब हुआ समर्पण
क्या कुछ रहा अदेय
एक जन्म के लिए बहुत है
बस इतना पाथेय
जगी-जगी सी मृदुल-कामना
सोया-सोया सा विराग वह
अपमानित सी खड़ी वेदना
सम्मानित था मधुर राग वह
तृष्णा सम्मोहन अभिन्न थे
एक हुए थे श्रेय-प्रेय
एक जन्म के लिए बहुत है
बस इतना पाथेय है

---

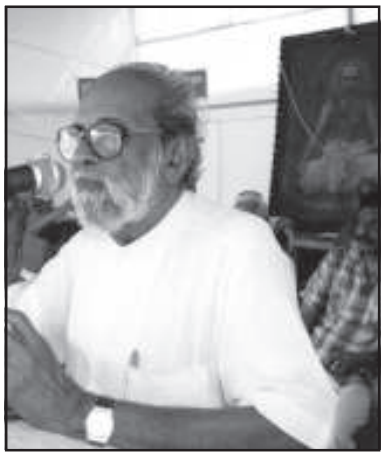

**अकादमी चेयरमेन डा.एन. चन्द्रशेखरन नायर श्री विद्याधि-राज पुरस्कार के संदर्भ में, फोटो दिवंगत शरत्‌चन्द्र द्वारा**

# डा. नत्थनसिंह: व्यक्तित्व और कृतित्व

**डा. नत्थनसिंह** का जन्म 4, जनवरी सन् 1923 को, ग्राम कराहरा, तहसील किरावली जिला आगरा (उ.प्र.) के, मध्यवर्गीय जमीदार ठाकुर सरदारसिंह के घर हआ था। आप पिता की दूसरी संतान हैं। उनसे बड़ी बहन भी और दो छोटे भाई हैं। इनकी प्राथमिक शिक्षा, घर से पचास कदम दूर स्थित स्कूल में हुई थी। यहाँ से कक्षा चार उत्तीर्ण करके आगे की शिक्षा के लिए, गाँव से चार मील दूर स्थित, मिडिल स्कूल ग्राम मिढ़ाकुर (आगरा) जाने लगे। कुछ दिन, एक बड़े घोड़े पर सवार होकर गए, इनके पीछे नौकर भागता जाता था। सक शिक्षक के परामर्श पर, घोड़े से जाना छोड़कर साईकिल पर गए। नौकर छोडने और फिर लेने जाता था। पिता को शंका थी कि यदि यह अन्य बालकों के साथ पैदल जायेंगे तो बिगड़ जायेंगे। लेकिन थोड़े दिन बाद, यह पैदल जानेलगे, लेकिन गाँव के और बालकों से दो-सौ कदम आगे चलाकरते थे और मार्ग में इतिहास, ज्योमित, साहित्य और भूगोल के पाठ्यक्रम को याद करते चलते थे। इससे उनके ज्ञान का निरंतर विकास होने लगा। चार मील की यात्रा एक ओर की थी।

इनके गाँव में, कुछ युवकों की एक मंडली थी, जो प्रायः महिलाओं के विषय में बातें किया करती की। छुट्टी के समय, यह भी उस मंडली के अंग बन गए थे और उसमें रस लेने भी लगे थे। सन् 1938 में इनका विवाह हो गया था। अस्तु, गाँव के कुछ लोगों ने, टिप्पणी की थी - सरदार सिंह ने सिगरेटें तो पीली हैं, पर बेटे को पढ़ा न सकेंगे। उसका विवाह होने के बाद तो असम्भव हो गया है। लेकिन माताश्री इनको गोद में बिठा कर, स्नेहपूरित नेत्रों से देंखतीं और कहतीं थीं - बैटे! इतना पढ़ जाओ कि तुम्हारे बराबर कोई और पढ़ा लिखा न हो। माता के शब्दों ने, इनको इतनी प्रेरणा प्रदान की थी कि सन् 1939 में इन्होंने मिडिल की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। उसके बाद सन् 1940 में उर्दु मिडिल, 1941 में विशारद, 1944 में हाईस्कूल, 1946 में इण्टर, 1948 में आगरा कालिज, आगरा से बी.ए. तथा 1950 में बी.आर.कालिज में एम.ए. उत्तीर्ण किया और 1956 में पीएच.डी की डिग्री पाई।

शोधप्रबन्ध लेखन के सन्दर्भ में, आपने कानपूर, लखनऊ, इलाहाबाद, बनारस और कलकत्ता की यात्राएं की और एक वर्ष में ही शोधप्रबन्ध लिख लिया, लेकिन डा.रामविलास शर्मा के परामर्श पर पुनः कलकत्ता गए, नई-सामग्री एकत्र की और शोध प्रबन्ध पूरा कर लिया। कलकत्ता सलकिया क्षेत्र देख्रने गए, जहाँ भगतसिंह ने भूमिगत जीवन बिताया था।

इनका युग, राष्ट्रीय-चेतना और स्वावलंबन का युग था। अतः आपने नौकरी तथा ट्यूशन करके धन भी कमाया और अध्ययन भी किया। एम.ए. प्रीवियस में पढ़ते समय, आपने आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के, सूरदास के विरह-वर्णन विषयक मत का, तर्कपूर्ण शैली में ख्रण्डन किया। फलतः उनके प्रोफेसर, उनके लेख्रन-कौशल पर मुग्ध हुआ और इनके लिख्रे उत्तर को; इनकी कक्षा में पढ़कर सुनाया। फलतः एम.ए. फाईनल में पढ़ते समय ही, इनको पार्टटाइम लेक्चरर बनाया! कालिज से एक-सौ रुपए प्रतिमास वेतन मिला तथा बी.ए. तक की कक्षाओं में अध्यापन किया। कालिज के प्राचार्य डा.आर.के.सिंह को पूर्ण संतोष प्राप्त हुआ। जूलाई 1950 में इनकी नियुक्ति जनता वैदिक कालिज बड़ौत में हुई और यहीं से सन् 1983 में, स्नात्कोत्तर हिन्दी विभाग से अवकाश ग्रहण किया। यहाँ छात्रावास के वार्ड़न, कालिज मागसीन के सँपादक, अन्य कई विभागों के संयोजक, आगए विश्व-विद्यालय, आगरा की कर्यकारिणी समिति के सदस्य, मेरठ विश्व विद्यालय की कार्यकारिणी के सदस्य रहे। आप ईमानदारी, योग्यता और श्रेष्ठता के अत्यधिक समर्थक थे, अस्तु मेरठ विश्व-विद्यालय से सम्बद्ध कालिजों में, आपने कई विषयों में योग्य शिक्षकों की नियुक्तियाँ की। भारत-सरकार के रेल-मंत्रालय एवं पैट्रोलियम तथा रसादान मंत्रालयों की हिन्दी-सलाहकार-समितियों के सदस्य भी रहे।

सन् 1965 में भरतपुर-क्षेत्र के प्रान्तिकारी किसानों पर 'उझऊ का टीला' नामक उपन्यास लिख्रा था। बाद में, उसका संशोधित संस्करण 'साक्षी है ये प्राचीरें' नाम से प्रकाशित हुआ श्रीकृष्ण तथा बलराम की क्रान्तिकारी भूमिका पर वासुदेव श्रीकृष्ण नाम से उपन्यास लिख्रा है, जो प्रकाशक के पास रख्रा है। इसके, अतिरिक्त, देश की कई पत्रिकाओं में लगभग एक-सौ लेख्र प्रकाशित हुए हैं।

आप की प्रकाशित आलोचनात्मक रचनाएं हैं - बाबू बालमुकुन्दगुप्त 1959, काव्य और कवि-1965, हिन्दी निबन्ध-1966, काव्य शास्त्र और हिन्दी निबन्ध-1966,

# साम्प्रदायिक एकता: भारत का चरित्र और आवश्यकता

डा. रवीन्द्रकुमार

**विभिन्नता** में एकता वाले देश भारत ने गत हज़ारों वर्षों से विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखी है। एक धर्म-विशेष के अनुयायियों का बहुमत होने के बावजूद भारत में अनेक समुदायों के लोग साथ-साथ रहते आए हैं। इस हेतु धर्मनिरपेक्षिता एवं सांप्रदायिक एकता की भावना ने सर्वप्रमुख भूमिका का निर्वाह किया है। दूसरे शब्दों में, सांप्रदायिक एकता भारत की मौलिक विशेषता रही है, और है; यही देश के जीवन की प्रमुख आवश्यकता भी है। इस संबन्ध में मैं निश्चितता के साथ कहने की स्थिति में हूँ कि जीवन के समस्त क्षेत्रों में और सभी स्तरों पर निरन्तर बढ़ती प्रगति के क्षण में, जबकि वैश्वीकरण की प्रक्रिया दिन दूनी रात चौगुनी गति से आगे बढ रही है, भारत में साम्प्रदायिक एकता की महत्ता और प्रासंगिकता भी उसी प्रकार से बढ़ेगी। उन लोगों को जो समय-समय पर सांप्रदायिक एकता को छिन्न-भिन्न करने का प्रयास करते हैं, उनको इस वास्तविकता को समझकर, इसे स्वीकारना ही होगा।

भारत में अनेक धर्म-सम्प्रदायों, विश्वासों, पंथों के अनुयायी बसते हैं। वे अनेक स्थानीय, क्षेत्रीय भाषाएँ बोलते हैं, और भिन्न-भिन्न मूल्यों-मान्यताओं के आधार पर दिन-प्रतिदिन के व्यवहारों से गुज़रते हैं। अनेकानेक प्राकृतिक-भौगेलिक भिन्नताओं और विद्यमान परिस्थितियों के बीच तालमेल बैठाकर भारतीयजन आजीविका के लिए उद्यम करते हैं। वे वास्तविकता को स्वीकारते हैं; उत्साह और हिम्मत के साथ आगे बढ़ते हैं। यही भारतीयों के समक्ष सर्वश्रेष्ठ रास्ता भी है। इसलिए सांप्रदायिक एकता ही स्थानीय राष्ट्रीय स्तर पर सुदृढ़ता भारत की नितान्त आवश्यकता है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। भारतीय लोकतंत्र का इतिहास अति प्राचीन है। भारतीयों के स्वभाव के यह पद्धति सर्वाधिक अनुकूल भी है। यही नहीं भारत की एकता, विशेषकर राजनीतिक एकता, के निर्माण में प्रजातंत्र मुख्य भूमिका का निर्वाह करता है। अनेक कठिनाइयों और संभावित बुराइयों के चलते भी भारत में लोकतंत्र साम्प्रदायिक एकता की मज़बूती हेतु बडा योगदान देता है। दूसरे शब्दों में, देश की एकता व अखण्डता के निर्माण हेतु यह एक बड़ी शक्ति के रूप में उभरता है लेकिन फिर भी आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय प्रजातंत्र अधिकाधिक लोगों - समस्त धर्म-सम्प्रदायों, उप सम्प्रदायों व पंथों के अनुयायियों के विश्वास का केन्द्र बने। यह आवश्यक है, क्योंकि यही देश को सुदृढ़ता प्रदान करने के साथ-साथ इसे विश्व का नेतृत्व करने में सक्षम बना सकेगा। और यह देश में सांप्रदायिक एकता द्वारा संभव है। इसलिए यह सांप्रदायिक एकता का बढ़ता क्रम भारत केलिए आवश्यक है। इसका कोई दूसरा विकल्प नहीं है।

**पूर्व कुलपति, मेरठ विश्व विद्यालय**

---

**डा. नत्थनसिंह: व्यक्तित्व और कृतित्व...**

काव्य शास्त्र और हिन्दी निबन्ध-1698, राजा महेन्द्र प्रताप-1986, यमुना से प्रशान्त महासागर-1984, पुनर्नवा-पुनर्मूल्यांकन-1980, इतिहास-पुरुष महाराजा सूरजमल-1976, खेत खालियान से राजधानी का सफरनामा-1991, हिन्दीकहानी: डालगावका दर्शन-1982, कौरवी लोकभाषा साहित्य-1991 भारतीयता के संरक्षक डा.एन.चन्द्रशेखरन नायर-1993 तथा केरलीय प्रेमचंद: डा.एन.चन्द्रशेखरन नायर (दिसम्बर 2000)।

आपने आलोचक रामाविलास शर्मा सन् 1983, डा.एन.चन्द्रशेखरन सप्ततिग्रंथ-1984, राजस्थान के किसान केसरी: नाथूराम भिर्धा-1986, बालमुकुन्द ग्रथाबली - 1993 आदि का सम्पादन किया है।

आपको केरल हिन्दी-साहित्य अकादमी, त्रिवेन्द्रम (केरल) से 1993 तथा 1996, राजभाषा विभाग, पटना (बिहार) और राजाश्री पुरुषोत्तमदास टंड़न, सिन्दी संस्थान (लखनऊ) से नकद पुरस्कार प्राप्त हुऐ। कई साहित्यकारकों पर प्रकाशित ग्रंथों में आपके लेख भी हुए हैं। अध्ययन और लेखन आपको व्यस्त रहने के साधन है। जब लेखन और मनन से ऊब पैदा हो जाती है तब निरालाक की राम की शक्तिपूजा नामक कविता और कामायनी पढ़ने लगते हैं। अपने में सब कुछ भर मानव कैसे विकास करेगा। औरों को हंसते देखो मनु, स्वयं हंसो सुख पाओ। अपने सुख को विस्तृत करलो, सबको सुखी बनाओ आदि कामायनी की पंक्तियाँ, आपको बल देती हैं। जीवनी शक्ति प्रदान करती हैं।

**मंत्री, केरल हिन्दी साहित्य अकादमी**

# भारतीय सांस्कृतिक एकताके प्रतीक ऋषि अगस्त्य

डॉ. एम.शेषन

**ऋषि** अगस्त्य को तमिल साहित्यकार तमिल भाषा के आदिकवि के रूप में मानते हैं। तमिल साहित्य की परंपरा में यह मान्यता है कि ऋषि अगस्त्य ने ही तमिल भाषा का सर्वप्रथम व्याकरण-शास्त्र रचा था तमिल काव्य के तीन संगमकाल में प्रथमसंगम युगीन कवि के रूप में वे समादृत हैं। संप्रति उपलब्ध तमिल के प्रथम लक्षण ग्रंथ तोलकापियम् के रचयिता तोलकापियर के ज्ञापगुरु माने जाते हैं। 'तोलकापियम' की रचना का समय लगभग २५०० पूर्व माना जाता है। ई.पूर्व. चौथी शताब्दी।

तमिल साहित्य-परंपरा के अनुसार बौद्धधर्म के संस्थापक अवलोहित के नाम से प्रसिद्ध बोधिसत्व से आपने मिल भाषा के व्याकरण शास्त्र का सान प्राप्त किया था तथा भगवान शंकर और उनका पुत्र कार्तिकेय (मुरुगन्) इन दोनों से भी आपने तमिलभाषा एवं साहित्य का ज्ञान अर्जित किया था। इसका विस्तृत विवरण तमिल में रचित 'कन्दपुराणम्' नामक ग्रंथ में हमें उपलब्ध हैं।

रामायण काव्य में इस बात का उल्लेख प्राप्त है कि भगवान श्रीराम ने ऋषि अगस्त्य का वन्दन और अभिनन्दन किया था। तमिल काव्यशास्त्र के सुविख्यात मर्मज्ञ एवं समीक्षक नाच्चिनार्-क्-किनियर ने अपनी समीक्षा में इस बात का उल्लेख किया है कि अगस्त्य मुनि ने महाभारत के भगवान कृष्ण से भेंट की भी और शारिकापुरी से पदिणेन्कुडि वेकिल नामक लोगों को तमिलनाडु ने आकर बसाया था।

श्रमणग्रंथों में अगस्त्य का उल्लेख प्राप्त होता है। यह किंवदन्ती है कि दक्षिण पूर्वी एशिया के सुमंत्रा जावा आदि द्वीपों में जाकर तमिल शैव धर्म और संप्रदाय को स्थापित करनेवाले शैवगुरु एवं आचार्य के रूप में माने जाते हैं।

तमिल साहित्य के पुराकालीन प्रबन्धकाव्य शिलप्पदिकारम् तथा मणिमेखलै तथा प्राचीन संगम काव्य के परिपाड़ल में भी अगस्त्यमुनि का उल्लेख प्राप्त होता है। सुदूर तमिलनाडु के पाण्ड्यप्रदेश के चिन्नमन्नूर में प्राप्त वेक्विक्कुडि ताम्रपट्टम (copper Plate) में यह उल्लेख प्राप्त है कि पाण्ड्य नरेशके आप राजगुरु और पुरोहित भी रहे। यह भी बताया जाता है कि तमिल के प्रसिद्ध शैवपुराण पेंपिरयपुराणम् की भांति अगस्त्य ने संस्कृत भाषा में भक्त विलासम् नामक ग्रंथ की रचना की थी। तमिल साहित्य की परंपरा के अनुसार अगत्तियम् नामक तमिल के प्रथम व्याकरण-शास्त्र ग्रंथ के साभ ही सिरुकचियम् तथा पेंरुचुचियम् नामक और दो ग्रंथ भी रहे हैं।

तमिल में यह परंपरा प्रचलित है कि भगवान शंकरजी तथा माता पार्वती का पाणीग्रहण विवाहोत्सव उत्तर में कैलाशपर्वत पर रचा गया था। उस विवाह महोत्सव में भाग लेनेवालों की अतिशय भीड़ के कारण हिमालय पर्वत नीचा होने लगा और दक्षिण भारत का भूभाग ऊँचा उडने लगा था। अतः उत्तर और दक्षिण दोनों भूभागों में समतुल्यता स्थापित करने से उद्देश्य भगवानशंकर ने ऋषि अगस्त्य को दक्षिम प्रदेश भेजा था। इस प्रकार की पौराणिक कथा तमिलप्रदेश में प्राचीनकाल से ही प्रचालित रही है। दक्षिण दिशा की ओर यात्रा के लिए प्रस्थान करते समय अगस्त्य मुनि अपने साथ गंगाजल ले आये थे ओर वही कावेरी नदी के रूप में प्रवाहित होने लगा।

वैष्णवों में यह मान्यता प्रचलित है कि द्वादश आलवारों के पाशुरम् (दिव्य स्तोत्रगीत्) गीतों के संपादन करनेवाले नाभमुमि ने भी अगस्त्य से आज्ञा पाकर उनकी अनुमति प्राप्तकर नालायिर दिव्य प्रबन्धम् (चार सहस्र पदावलि) का संपादन किया था।

आज भी तमिल लोगों में यह विश्वास प्रचलित है कि सुदूर तिरुनेलवेली जिला के प्रोदियमलै, (पोंदिय पर्वत) में अगस्त्य वास करते हैं। भीष्मकाल में लोग अगस्त्य के दर्शतार्भ पोंदियमलै की यात्रा करते हैं। यह पर्वत तिरुनेलवेली जिला के पापविनाशम् नामक झरने के ऊपर स्थित पुण्यतीर्थ माना जाता है। उसके भी ऊपर कल्याण तीर्थ और बाणतीर्थ आदि हैं। लोग तीन चार दिन की यात्रा के उपरान्त पर्वतारोहण करते हुए अगस्त्य के दर्शन कर आनन्दलाभ प्राप्त करते हैं। तमिलों में यह विश्वास प्रचलित है कि तमिलभूमि न केवल तमिलभाषा के लिए बल्कि सिद्धवैद्यशास्त्र के लिए भी यह जन्मभूमि है। सिद्धवैद्यशास्त्र में महर्षि अगस्त्य के लिए महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यही नहीं अठारह विद्धपुरुषों की परंपरा में भी महर्षि अगस्त्य का नमोल्लेख प्राप्त है।

इस प्रकार साहित्य व्याकरणशास्त्र भक्ति, वैद्यशास्त्र, धर्म आदि विभिन्नक्षेत्रों में बहुमुखी प्रतिभासंपन्न महर्षि अगस्त्य तमिल-संस्कृति शैव-वैष्णव, श्रमणधर्म–बौद्धधर्म, रामायण-महाभारत और दक्षिण, हिमालय-कन्याकुमारी, गंगा-कावेरी, उत्तर् भारतवासी - दक्षिण भारतवासीयों के बीच सद्भावना और सौहार्द भाव स्थापित करनेवाले महर्षि के रूप में भारतीय संस्कृति में समादृत पुरुष हैं।

विशेष रूप से, प्राचीन तमिल भाषा, द्राविड जाति, धर्म इन सबसे ऊपर उठकर भारतीय संस्कृति के इतिहास में एक शलाका-पुरुष, भव्य प्रतिभा (ICON) के रूप में वे समादृत है। भारतीय भावात्मक एवं सांस्कृतिक एकता के प्रीक के रूप में महर्षि अगस्त्य आज भी गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त चुके हैं यह हमारे लिए विस्मय एवं गौरव की बात है। •

# चिरंजीव महाकाव्य: पोस्ट इन्डस्त्रियल युग का महाकाव्य

डॉ. सूरज बहादुर थापा

**केरल** के लब्धप्रतिष्ठित साहित्यकार डा.एन.चन्द्रशेखरन नायर का सद्यः प्रकाशित (अक्टू, 2009) महाकाव्य - 'चिरजीव' - उनकी रचनाशीलता की गंभीरता एवं युग-सापेक्ष्य चिंतन का सुंदर निदर्शन है। इस महाकव्य के तृतीय अध्याय 'व्यासदेव' की यह पंक्ति - 'लोक मंगल कार्य की रचना धार्मिता' इसका ज्वलंतत प्रमाण है। इस काव्य पंक्ति से कवि की रचनात्मक दशा और दिशा का भी स्पष्ट रूप से पता चलता है। आज के बाज़ारवादी एवं उपभोक्तावादी समाज में 'लोकमंगल के कार्य' को अपनी 'रचनाधर्मिता' का मूलमंत्र बनाना वास्तव में एक बहुत बड़ी बात है। कवि 'चिरजीव कथा-विधान' को 'नूतन' रूप से रचना चाहते है - 'रचने दें नूतन चिरजीव कथा-विधान' - ताकि वे उसे कलियुग की 'अमृतकथा' बना सकें - 'कलियुग की अमृतकथा बनने दें'।

विवेच्य महाकाव्य की रचना का आधार संसकृत का यह कथन - 'अश्वत्थामा वलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः कृपः परशुरामश्च सपौते चिरजीवनः' - प्रतीत होता है। महाकाव्य के प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में यह वाक्य विद्यमान् है। इस कथन में प्रयुक्त 'चिरजीविनः' शब्द से ही 'चिरजीव' शब्द को लिया गया है। यहाँ 'चिरजीव' का अर्थ अमरता है। सात पौराणिक पात्र - अश्वत्थामा, महाराज बलि, व्यासदेव, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य और परशुराम अमर हैं, क्योंकि कवि के अनुसार - 'जीवन हैं इनके महाद्भुत। इस कारण से नाम है चिरजीव।' इनकी कथा कलियुग की 'अमृतकथा' बनने योग्य इसलिए है कि-

मानव जीवन का शाश्वत
भाव रूप में अति आकर्षक
द्युतिमान रहे धे ये सातों
निज परंपरा में अक्षुण्ण

महाकाव्यकार को इन सात महान चरित्रों में मानव-जीवन के शाश्वत, अति आकर्षक और द्युतिमान तत्व परिलक्षित होते हैं, जो आज के युग संदर्भो में प्रासंगिक एवं प्रेरणास्पद हैं। आज के अणुयुग में युद्ध के संबंध में इन चरित्रों के मंतव्य अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनमें से बलि की कथा को छोड़कर सभी श्रेष्ठ पुरुषों ने यों तो स्वयं महायुद्धों में भाग लिया अथवा इन महायुद्धों के द्रष्टा रहे। अश्वत्थामा और कृपाचार्य महाभारत युद्ध से सन्नद्ध थे और महर्षि व्यास उस भीषण युद्ध के द्रष्टा एवं उसके चितेरे महाकाव्यकार थे। हनुमान और विभीषण रामायण के महत्वपूर्ण चरित्र हैं जिन्होंने राम-रावण संघर्ष में सक्रियता के साथ भाग लिया। परशुराम ने भी अनेक भीषण युद्ध किए और महाराज बलि ने धर्मपथ पर जीवन-संघर्ष किया। इनमें जो तत्व उभम रूप से विद्यमान है, वह है निज धर्मानुसार संघर्ष-पथ से कभी भी विचलित न होना। कवि के शब्दों में-

कर चुके वे संग्राम अनेक
पर आदर्श नहीं था संग्राम का
फिर भी किया निर्भीक स्वत्व ले
धर्म का उद्घोष साथ था

युद्ध और तद्जनित विद्धंस कवि को काम्य नहीं है। कवि यह उत्कट रूप से चाहते हैं - भारत को खण्ड-खण्ड न रखना। पूर्व पीठिका में उन्होंने वासुदेव कृष्ण के श्रीमुख से कहलवाया है -

भारत में कभी न रहे युद्ध आगे
अश्वत्थामा बने सौम्य व्यास
बौट दें वेद देश कल्याण हेतु

आगे भी कृष्ण कहते हैं -

मैं इस आर्ष भूमि का
आत्म तत्व हूँ ब्रह्म हूँ
बना हूँगा अणु शक्ति का
मानव मंगल रूप जरात को

आज की जो अणु शक्ति है, उससे विध्वंसकारी बम न बनाये जायें। अणुशक्तति का प्रयोग मानव कल्याण हेतु हो। कवि ने अपने महाकाव्य के द्वारा संसार को यही संदेश देना चाहा है। अपने इसी अभीष्ट की पूर्ति के लिए उन्होंने सात अमर पात्रों की उदात्त जीवन कथा को चिरंजीव महाकाव्य में प्रस्तुत किया है।

चिरजीव महाकाव्य में पूर्व पीठिका के अतिरिक्त सात अध्याय हैं। इन अध्यायों में एक-एक कर सातों महापुरुषों के जीवन-चरित का गायन किया गया है। प्रत्येक अध्याय एक स्वतंत्र काव्य-रचना की भांति है और चिरंजीवों की कथाएँ

# छायावाद पर म. गांधी का प्रभाव

**डॉ. पंडित बन्ने**

**आधुनिक** युग में गांधी जी तथा गांधीवाद के प्रभाव से हिंदी में अधिक मात्रा में कविताएँ रची गयीं। जब गांधी जी द. अफ्रिका में सत्याग्रह आंदोलन करते थे, तभी उनसे प्रभावित होकर माखनलाल चतुर्वेदी जी ने 'नि:शास्त्र-सेनानी' (1923 में) कविता लिखी थी। मैथिलीशरण गुप्त, हरिऔध, बालकृष्ण शर्मानवीन, सुमित्रानंदन पंत, रामधारी सिंह 'दिनकर' आदि ने गांधीवाद से प्रभावित होकर महाकाव्य, खण्डकाव्य तथा गीति काव्यों की रचनाएँ कीं। सियारामशरण गुप्त जी ने अपनी रचनाओं में गांधीवाद की तात्विक अभिव्यक्ति की। गांधीवाद से प्रभावित होकर केवल गीत लिखनेवालों में माखनलाल चतुर्वेदी, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' सभद्राकुमारी चौहान, गोपाल सिंह 'नेपाली', सोहनलाल द्विवेदी, शिवमंगल सिंह 'सुमन', हरिवंशराय बच्चन भवानीप्रसाद मिश्र, जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, नीरज, नरेन्द्र शर्मा और हरिकृषण प्रेमी आदि प्रमुख हैं।

हिन्दी कविताओं में गांधीजी के महान व्यक्तित्व का गुणगान ही अधिक मात्रा में होने पर भी अहिंसा-तत्व, सत्याग्रह, धर्म समभाव, स्वाधीनता-आंदोलन, खादी और चरखा, अछूतोद्धार, सांप्रदायिक एकता गांधीवादी विचारों का भी काफी प्रभाव परिलक्षित होता है।

**1. सत्य की अभिव्यक्ति:** गांधीवाद के मूलतत्व है सत्य और अहिंसा। डॉ.सुषमानारायण ने कहा, "गांधीजी के सत्य तथा अहिंसा की मीमांसा, हिंदी काव्य क्षेत्र में श्री 'त्रिशूल' श्री माखनलाल चतुर्वेदी, श्रीमती सभद्राकुमारी चौहान आदि ने की है।"

गांधी दर्शन के प्रशंसक, श्री गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने गांधी जी का स्तवन करते हुए बताया कि जिन सत्य, अहिंसा और प्रेम से दीनों लोक उदित हुए उनकी जय हो। सत्य और अहिंसा के राही विश्ववंद्य बापू की जय हो।

"जय सत्य, अहिंसा और प्रेम
जिससे त्रिलोक हुआ उदय।
जय मोहन की जय गांधी का
जय विश्ववंद्य बापू की जय।।"

सुमित्रानंदन पंत जी ने सत्य को मानव जीवन की परिचाल शक्ति बताया है। उनके अनुसार जिसका शरीर भूतवाद हो और मन प्राणवाद हो वही सत्य, मानव जीवन का परिचालन कर सकता है।

"वही सत्य कर सकता मानव जीवन का परिचालन।
भूतवाद हो जिसका रजतन, प्राणावाद जिसका मन।।"

**2. अहिंसा की अभिव्यक्ति:-** 'अहिंसा' सांधी जी के लिए सत्य प्राप्ति का साधन थी। इस अहिंसा में दया, करुणा, प्रेम आदि सब भाव छिपे हैं। गांधी जी की अहिंसा कायरों

---

**चिरंजीव महाकाव्य : पोस्ट इन्डस्त्रियल युग का महाकाव्य...**

आत्यंतिक रूप से एक-दूसरे से जुड़ी हुई नहीं हैं। अतएब महाकाव्य की रचना के लिए आद्यन्त किसी एक कथा के विकास और विस्तार की परंपरागत परिपाटी यहाँ अनुपास्थित है पर बावजूद इसके अनेक परंपरागत तत्व भी यहाँ परिलक्षित होते हैं, यथा-प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में गणेशादि देवताओं की स्तुति के रूप में मंगलारण की प्रवृत्ति मिलती है। कथा कहने की शैली भी इतिवृत्तात्मक है। पूरे महाकाव्य में कथा कथाओं का वर्णन अभिधा में ही प्राप्त होता है, लक्षणा-व्यंजना का प्रयोग न के बराबर है। तत्सम प्रधान होते हुए भी भाषा सहज है। बिम्ब-विधान या शैली-विज्ञान के तत्वों के प्रति कवि बिलकुल उदासीन रहे हैं। कहा जा सकता है कि कवि ने रूप की अपेक्षा वस्तु पर ही अधिक बल प्रदान किया है। कथा के बीच से कथाएँ निकलती रहती हैं जो कभी-कभी पताका-प्रकरी सी प्रतीत होती हैं।

चिरजीवों में अश्वत्थामा और कृपाचार्य के चरित-ऋान लोकमंगल कार्य ही रचनाधार्मिता के उद्देश्य को पूर्ण करने में कितने सक्षम हैं, यह एक विचारणीय प्रश्न हो सकता है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि आज के तथाकथित प्रोस्टइंडस्ट्रियल युग में जब महाकाव्य लेखन का प्रायः लोप सा हो चुका है, डॉ. एन.चन्द्रशेखरन नायर ने चिरजीव महाकाव्य का प्रणयन कर अपनी सुसाहसपूर्ण रचनाशीलता का परिचय दिया है।

**रीडर, हिन्दी विभाग, लेखनऊ, वि.वि., ३/२०,**
**न्यू बहार, सहारा स्टेट्स, जानकीपुरम, लखनऊ-२२६०२१**

की अहिंसा नहीं है। उसमें लाखो तलवारों को हँसते सामना करने की शक्ति है। माखनलाल चतुर्वेदी जी ने 'निःशस्त्र सेनानी' (1923) कविता में बताया है कि लाखों तलवार निःशास्त्र पर टूट पडे और हाहाकार मच जायें, लेकिन बलि पशु के समान निःशास्त्र सेनानी मरने के लिए तैयार रहते हैं। वह कहता है कि पटल जाय चाहे संसार इन हाथों में तलवार न लूँगा।

"लपकती है लाखों तलवार, मचा डालेंगी हाहाकार।
मारने मरने को मुहार खडे है बलि पशु सब तैयार।।
पटल जायें संसार न लूँगा इन हाथों तलवार।"

सुभद्राकुमारी जी ने हिंसा भाव को लाग कर वीर अशोक बनने के लिए प्रेरणा देते हुए कहा कि अहिंसक वीर अशोक के समान ऐसा काम करें जिससे इहलोक और परलोक दोनों बने।

"हम हिंसा का भाव लाग कर विजयी वीर अशोक बने
काम करेंगे वही कि जिसमें लोक और परलोक बने।"

गांधी-कवि सोहनलाल द्विवेदी जी ने सत्य और अहिंसा के महत्व समजाते हुए कहा कि सबको मिलानेवाला धर्म ही श्रेष्ठ धर्म है। अहिंसा ही जीवन का मर्म है। सतकार्य ही संत्य की सेवा है।

"अहिंसा ही जीवन का मर्म
सत्य की सेवा हो सत्कर्म"

**3. शांति कामना की अभिव्यक्तिः-** गांधी जी विश्व के शांतिकामी थे। उनका विश्वास था कि सर्वोदय ही जगत् में शांति संभव है। 'दिनकर' जी के विचार में जब तक सबको बराबर सुख्र न मिलता तब तक शांति संभव नहीं। यथा-

"शांति नहीं तब तक, जब तक,
सुख्र भाग न नर का सम हो।"

'नीरज' का विश्वास है कि युद्ध से शांति नहीं मिलेगी। अतःतलवार के बदले प्यार से लडे।

"तुम शांति नहीं ला पाये युद्धों के द्वारा
अब फेंक ज़रा तलवार, प्यार लेकर देख्रो
दुश्मन को अपना हृदय जरा देख्रकर देख्रो।"

उक्त बातों से स्पष्ट होता है कि युद्ध से कभी शांति संभव नहीं। शांति का मार्ग सर्वोदय है।

**4. स्त्री-जागृतिः-** भारत में अस्पृश्यता और हिंदु-मुस्लिम विद्वेष के समान नारी-दुर्दशा भी एक अभिशाप है। ये सब भारत की उन्नति में बाधाएँ हैं। इसलिए गांधी जी ने इन बाधाओं को दूर करके भारत को मुक्त करने का प्रयत्न किया। पंतजी नारी को वासना के गर्त से ऊपर उठाने का आग्रह करते हुए लिख्रते हैं कि नारी केवल भोग की वस्तु नहीं। उसे भी स्वतंत्रता दो। वह पुरुष पर अवलंबित न रहे स्त्री-पुरुष के स्वाभाविक स्नेह से ही मानवता का विकास होगा।

"योनि नहीं रे नारी वह भी मानवी प्रतिष्ठित
उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित
नर नारी के सहज स्नेह से, सूक्ष्म वृत्ति को विकसित।"

ग्राम स्त्रियों की दशा अत्यंत शोचनीय थी। सुमित्रानंदन पंत जी का मन ग्रामवधुओं की ओर गया। उनका अबोध स्वभाव, सरल जीवन और ग्राम का प्राकृतिक सौदर्य आदि ने कवि को आकर्षित किया। पंत जी के लिए भारतमाता ग्रामवासिनी लगी। हरे भरे खेत के बीच में ग्राम वधुएँ मैं आँचल में आँसू बहाते हूए उदास खडी है।

"भारतमाता
ग्रामवासिनी!
खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा मैला-सा आँचल,
गंगा यमुना में आँसू जल,
मिट्टी की प्रतिमा
उदासिनी।"

सुभद्रासुमारी चौहान ने नारी के अबला रूप को नहीं, अबलाओं के मर्दानी रूप को झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की वीरता वर्णन दिख्राया है-

"चमक उठी सन सत्तावन में
वह तलवार पुरानी थी
खूब लडी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी।"

**5. सांप्रदायिक एकताः-** महात्मा गांधी जी ने धार्मिक समन्वय के दवारा हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए जीवनवपर्यन्त प्रयत्न किया और अंत में उसी काम में कुरबान हो गये। धार्मिक एकता से ही भारत की आज़ादी संभव मानकर रूपनारायण पाण्डेय जीने सबको मिलकर लडने का संदेश दिया। उन्होंने कहा कि जैन, बौद्ध, फास, फारशी, यहूदी, मुसलमान, सिख, ईसाई आदि विभिन्न धर्म के लोक सब

मिलकर कहे कि सब भाई-भाई है-

"जैन, बौद्ध, फारसी, यहूदी,
मुसलमान, सिख, ईसाई।
कोटि कंठ से मिलकर कह दो
हम सब है भाई-भाई।"

**6. स्वदेशी सिद्धांत:-** गाँधी जी के भारतीय राजनीति में प्रवेश करने के पहले ही स्वदेशी-आंदोलन चल रहा था। इस आंदोलन को बढावा देते हुए गांधी जी ने आर्थिक स्वावलंबन की दृष्टि से विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार से साथ-साथ स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार भी आवश्यक माना। रायदेवीप्रसाद 'पूर्ण' ने 'स्वदेशी कुंडल' कविता में देश कल्याण के लिए साधन विदेशी की महत्ता समझायी है। कवि ने पूछा कि हे भारत-संतान, मुम्हें अपनी जननी और जन्मभूमि का ख्याल है? तुम देश का ही पानी पीओ और अन्न खाओ। तुम्हारे नस-नस में देशी का रक्त ही बहें।

"देशी प्यारे भाइयों। हे भारत संतान।
अपनी माता-भूमि का है कुछ तुमको ध्यान?
पुरानी पीना देश का, खाना देशी अन्न
निर्मल देशी रुधिर से नस-नस हो संपन्न।"

**7. ग्रामोध्दार:-** भारत जैसे ग्राम प्रधान देश में किसानों की स्थिति शोचनीय होने से महात्मा जी ने ग्रामों के विकास की ओर अधिक ध्यान दिया। हिंदी के कवियों ने महात्माजी की इसी ग्रामोद्धार-भावना से प्रभावित होकर असंख्य कविताएँ रचीं। पंत जी ने 'ग्राम्या', मैथिलीशरण गुप्त ने 'किसान' और सोहनलाल द्विवेदी जी ने 'सेवाग्राम' आदि काव्य रचना की। राष्ट्र का कर्णदार किसान है। देश की उन्नति उस कर्मठ के हाथ में ही है। इसलिए सोहनलाल द्विवेदी जी किसान से कहते हैं कि तुम्हारे जागृत हुए बिना देश की उन्नति की मीनार न उठेगी।

"तुम्हें नहीं क्या ज्ञात राष्ट्र के
तुम हो कर्मठ कर्णदार
बिना तुम्हारे उठे न उठ
सकती है उन्नति की मीनार।"

'ग्रामनारी' कविता में गाँव की नारी के शील-सौंदर्य का वर्णन पंत जी ने किया है। पुरुष की सहचरी ग्रामवधू दीन, अशिक्षित होने पर भी वह स्वस्थ, स्नेह, शील, सेवा और ममता की प्रतिमूर्ति है। यह ग्राम वधू नगर की नारी की अग्रजा है।

"वह स्नेह, शील, सेवा, ममता की मधुर मूर्ति,
यद्यपि चिर दैन्य, अविद्या के तम से पीडित,
कर रही मानवी के अभाव की आज पूर्ति,
अग्रजा नागरी की, यह ग्राम वधू निश्चित।" -सुमीत्रानंदन पंत

**8. मज़दूर:-** मज़दूर के श्रम-जीवन का गुणगान सोहनलाल द्विवेदी जी ने भी 'मजदूर' कविता में करते हैं। मजदूर तुझमें महान शक्ति है। तू कपास खेती से लाकर धुन बुनकर, सुंदर वस्त्र बनाकर इस नग्न विश्व को महनाते हो। तुम विश्व को नित्य नया वस्त्र पहनाते हो।

"मज़दूर! भूजायें वे तेरी
मज़दूर, शक्ति तेरी महान
खेती से लाती है कपास
इस नग्न विश्व को पहनाता
तू नित्य नवीन वस्त्र अनुपम।"

**9. उदात्त राष्ट्रवाद:-** गांधी जी उदात्त राष्ट्रवादी थे। माखनलाल चतुर्वेदी जी के पूर्णत्व की प्रतिमा राष्ट्र को कृष्ण के रूप में स्वीकारा। कृष्णोपासना भी स्वराज्य यज्ञ का परवर्ती रूप है। भारत भूमि को आराधना का मंदिर मानकर लिखते हैं कि भारतमाता को हिमालय मुकुट पहनाता है और सागर उसके पादों को घोता है। यह मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वार सब मेरे हैं-

"हो मुकुट हिमालय पहनाता,
सागर जिसके पद धुलवाता
यह वंधा बेडियों में मंदिर,
मस्जिद गुरुद्वारा मेरा है।"

**10. बलिदान की भावना:-** गांधी जी शास्त्रबल से मनोबल में हिंसक क्रांति से हृदय परिवर्तन में और मरने से खुद मरकर जीतने में विश्वास रखते हैं।

विलासपुर जेल में लिखी गयी माखनलाल चतुर्वेदी जी की प्रसिद्ध कविता पुष्प की अभिलाषा में कवि ने केवल बलिदानी वैष्णव व्यक्तित्व की निष्ठा प्रकट हुई है वरन् उस युग के संपूर्ण राष्ट्रीय संघर्ष की चेतना भी ध्वनित हुई है। कवि मातृभूमि के लिये उत्सर्ग की भावना व्यक्त करते हए फूल के मूँह से कहलाते हैं कि हे वनमाली, मुझे तोडकर जिस पथ में मातृभूमि के लिए वीर बलिदान करने गये थे, उस पथ में फेंक दो।

# आलोचना के मर्मज्ञ: नामवर सिंह

**के. तुलसी देवी**

**महत्वपूर्ण** आलोचना की एक कसौटी यह बतायी गयी है-

"कोई आलोचक उसी हद तक बडा है जिस हद तक वह अपने युग और समाज की अन्तरात्मा का काम करता है", कहना न होगा, यह मानदंड किसी भी चयनकर्ता को मुश्किल में डाल सकता है। यह चयन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण साक्ष्य के रूप में स्वीकृति या असहमति पर नहीं, सहमति-असहमति के ठोस कारणों और तर्कों पर निर्भर करती है।

हिन्दी भाषा के बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न रचनाकारों में डॉ. नामवरसिंह अग्रणी हैं। वह भारतमाता के सच्चे सपूत है जिन्होंने अपने आलोचना धर्म में सत्य, शिवम, सुन्दरम् की चिर अभिव्यक्ति की है। उनका श्रेष्ठ और प्रेरक लेखन हिंदी साहित्य की बहुमूल्य निधि है। वह हिंदी साहित्य में अमर है नामवर जी का जन्म 28 जूलाई, 1926 में बनारस जिले का जीयनपुर नामक गाँव में हुआ। प्राथमिक शिक्षा बगल के आवजाफर गाँव में हुआ। बनारस के डीवेट क्षत्रिय स्कूल से मैट्रिक और इंटरमिडिएट उदयप्रताप कालेज में हुआ। उन्होंने 1941 में कविता से लेखक जीवन की शुरुआत की। उनकी पहली कविता 1941 में 'क्षत्रियमित्र' पत्रिका में प्रकाशित हुई। 1949 में काशी हिंदु विश्वविद्यालय से बी.ए. और 1951 में वही से हिंदी में एम.ए. किए। उन्होंने 1956 में 'पृथ्वीराज रासो की भाषा' में पी-एच.डी किए। 1959-60 में सागर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में असिस्टेंट प्रोफेसर काम में रहे।

1960 से 1965 तक बनारस में रहकर स्वतंत्र लेखन।

---

**छायावाद पर म. गांधी का प्रभाव...**

"मुझे तोड लेना वनमाली,
उस पथ में देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढाने
जिस पथ जावे वीर अनेक।"

**11. स्वराज्य भावना:-** छायावादी कवियों ने स्वराज्य स्वतंत्रता या राष्ट्रीयता संबंधी कविता गयी है। गिरिधर शर्मा ने 'राष्ट्रीय गान' में राष्ट्रीय एकता की ओर संकेत किया है। उन्होंने कहा कि सुंदर भारत देश सब के लिए है पंजाबी, गुजराती, बंगाली, ब्रजवासी, मद्रासी, राजस्थानी सबका है।

"जय जय प्यारे देश! रम्य हमारे देश!
राजस्थानी या मदरासी
सब के सब है भारतवासी।"

**12. राष्ट्रभाषा संबंधी सांधी-विचार की अभिव्यक्ति:-** हिन्दी को राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा पद पर आसीन कराने में गांधीजी का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। 1916 में ही गांधी जी ने हिंदी भाषा आंदोलन शुरु कर दिया था, और वह उनके रचनात्मक कार्यक्रम का अंग बन गया था।

जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी जी ने हिंदी भाषा के प्रति प्रेम प्रकट करते हुए लिख्रा कि हिंदी की जय हो। सबके दुःख को दूर करनेवाला हिन्द और हिंदी महामंत्र है।

"जय जय हिंदी जय जय हिंद, जय जय हिंद जय गोविंद
महामंत्र इसका है नाम, दुख दलन इसका है काम।"

बालकृष्ण राव जी ने बापू के निर्वाण पर कहा कि ज्योति ने पाई अमरता। दीप ने निर्वाण पाया। बिंदु रूपी गाँधी जी ने सिंधु का रूप पाया। गांधी जी का स्वर कोटि कंठो में समाया था। बापू नाविक को मंझधार में ही किनारा मिल गया। हिंसा के अघात से मरण को भी शरण देकर मृत्यंजय हुए।

"आज हिंसा के कठिन,
आघात से अक्षय हुए तुम,
शरण देकर मरण को भी
आज मृत्यंजय हुए तुम।"

छायावादी कवियों ने गांधी-स्तवन और गांधीवाद से प्रभावित काव्य, प्रचार साहित्य होने से कला की दृष्टि से उत्कृष्ट साहित्य नहीं है परंतु गांधीवाद को आत्मसात करते रचित काव्य जैसे 'पथिक', 'उन्मुक्त', 'बापू', 'साकेत' आदि सचमुच उच्च कोटि के हैं। अतः इससे स्पष्ट होता है कि छायावादी कवियों पर म. गांधी का प्रभाव है।

**डॉ. पंडित बन्ने, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, भारत महाविद्यालय,**
**जोऊर तहसील-करमाला, जि.सोलापुर (महाराष्ट्र)**

1965 में 'जनयुग' साप्ताहिक के सम्पादक के रूप में दिल्ली में रहे। इस दौरान दो वर्षों तक राजकमल प्रकाशन के साहित्यिक सलाहकार काम में रहे। 1967 से 'आलोचना' त्रैमासिक का सम्पादन। 1970 में जोधपुर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष-पद पर प्रोफेसर के रूप में नियुक्त। 1971 में 'कविता के नए प्रतिमान' पर साहित्य अकादेमी का पुरस्कार। 1974 में थोडे समय के लिए क.मा.मुं. हंदि विद्यापीठ, आगरा के निदेशक। उसी वर्ष जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केन्द्र में हिन्दी के प्रोफेसर के रूप में योगदान। 1987 में वहीं से सेवा-मुक्त। अगले पाँच वर्षों के लिए वहीं पुनर्नियुक्त। 1996 तक राजा राममोहन राय लाइब्रेरी फाउंडेशन के अध्यक्ष। फिलहाल महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के कुलाधिपति तथा 'आलोचना' त्रैमासिक के प्रधान सम्पादक।

कृतियाँ: बकलम ख़ुद (1951), हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग (1952), आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ (1954), छायावाद (1955), पृथ्वीराज रासो की भाषा (1956), इतिहास और आलोचना (1957)।

कहानि: नई कहानी (1966), कविता के नए प्रतिमान (1968), दूसरी परम्परा की खोज (1982), वाद-विवाद संवाद (1989), कहना न होगा (साक्षात्कारों का संग्रह (1965), आलोचक के मुख से (2005), काशी के नाम (पत्र:2006)।

पाश्चात्य साहित्य में एक कहावत है: प्रथम कवि के साथ ही "प्रथम आलोचक जन्मा था"। यह कथन सिर्फ साहित्य पर ही लागू नहीं होता बल्कि विचारधारा के क्षेत्र में भी लागू होता है। नामवर जी ने क्या लिखा-कहा है वह तो महत्वपूर्ण है ही लेकिन उससे भी महत्वपूर्ण यह है कि उन्होंने किसके लिए लिखा है, उनका लेखन किसको संबोधित है, उनकी आलोचना क्या तलाश रही है? इत्यादि, इस अन्वेषण को आलोचना ही पहचान सकती है। इसीलिए नामवर जी साहित्येन्तर अनुशासनों की समकालीनता को एक साथ रखकर अपनी आलोचना को खड़ा करते हैं।

अपने सत्तर साल के लेखकीय जीवन में नामवर जी ने करीब आठ पुस्तकों की रचना की। उनके साक्षात्कारों के संग्रह 'कहना न होगा' को भी ले लें तो नौ पुस्तकें। इसके अलावा शताधिक लेख ऐसे हैं जो कहीं संग्रहीत नहीं हैं, पत्रिकाओं में बिखरे पडे हैं। फिर भी यह एक दिलचस्प तथ्य है कि नामवर जी ने जितना लिखा है उससे कई गुना ज्यादा वे बोले हैं।

'हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग' डॉ. नामवर सिंह की पहली पुस्तक है। इसका प्रकाशन १९५२ में हुआ था। वस्तुत: यह नामवर जी का शोध-प्रबंध है, यह शोध-कार्य आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निर्देशन में काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हुआ था। इस पुस्तक में पचासों ऐसी मारक एवं महत्वपूर्ण आलोचकीय टिप्पणियाँ हैं जिनसे नामवर सिंह के भावी आलोचक रूप का गंभीर संकेत मिलता है। पुस्तक दो खंडों में विभाजित है - भाषा खण्ड एवं साहित्य खण्ड।

भाषा खंड में तीन अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में अपभ्रंश भाषा के उद्भव एवं विकास पर व्यापक ढंग से विचार किया गया है। नामवर जी ने 'अपभ्रंश' संज्ञा एवं उसके अर्थ पर विचार करते हुए अपभ्रंश शब्द की प्राचीनता पर विचार किया है। पूरि शिद्दत के साथ अपभ्रंश के उत्थान के ऐतिहासिक कारणों के साथ-साथ उसके भेदों की भी तलाश की गयी है। द्वितीय अध्याय में नामवर जी ने परवर्ती अपभ्रंश में हिंदी के बीज की खोज की है। इस प्रक्रिया में अपभ्रंश की कृत्तियों मसलन उक्ति-व्यक्ति प्रकरण एवं राउल बेल को उन्होंने अपना आधार बनाया है। साहित्य खंड-पुस्तक अधिकांश अंश में अपभ्रंश साहित्य का विश्लेषण एवं मूल्यांकन किया गया है। सबसे पहले नामवर जी ने अपभ्रंश के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य करनेवाले विदानों की उपलब्धियों का उल्लेख किया है। साथ ही साथ 138 महत्वपूर्ण ग्रंथों की सूची भी दी है।

'छायावाद' उनकी एक स्वतंत्र पुस्तक है। इस पुस्तक की रचना नामवर जी ने 'छायाचित्रों' में निहित सामाजिक सत्य को उद्घाटित करने के लिए की। यह नामवर जी की दूसरी पुस्तक है। इस पुस्तक में कुल बारह अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में छायावाद का इतिहास है तो दूसरे से छठे अध्याय तक वस्तु पक्ष का विश्लेषण है जबकि सातवें अध्याय से दसवें अध्याय तक शिल्प पक्ष का विश्लेषण है। ग्यारहवें अध्याय में छायावादी कविता की उपलब्धियों एवं सीमाओं का विवेचन है जबकि बारहमें अध्याय में

साहित्य की अन्य विधाओं पर छायावादी प्रभाव का विश्लेषण है। यह पुस्तक छायावाद पर एक मानक ग्रंथ माना गया।

'इतिहास और आलोचना' नामवर जी की तीसरी पुस्तक है। इस पुस्तक में रचना, रचनाकार एवं समाज के आपसी संपर्कों, संबंधों एवं अन्तरसंबधों के विविध पहलुओं को उद्घाठित करते हुए सात निबंध हैं। तो काव्यालोचन एवं आलोचना से संबधित सात निबंध हैष साहित्येतिहास की विविध समस्याओं से जुझते हुए तीन निबंध हैं। रचना, रचनाकार एवं समाज की जटिल गुन्थियों को सुलझाने की कोशिश में नामवर जी ने अपने विचारों को पूरी बेबाकी के साथ व्यक्त किया है। साहित्येतिहास से संबंधित अपने तीन ऐतिहासिक निबंधों में नामवर जी ने पूर्ववर्ती इतिहासकारों की गंभीर समीक्षा करते हुए जहाँ उनके सामर्थ्य को उद्घाटित किया है वहीं उसकी सीमा को भी बतलाया है। इस पुस्तक में पहली बार साहित्येतिहास की समस्याओं पर मार्क्सवादी पद्धति से विचार किया गया है।

'आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ' नामवर जी की चौथी पुस्तक है। इसमें चार निबंध संग्रहित हैं। इन निबंधों में हिन्दी साहित्य के महत्वपूर्ण चार आन्दोलनों का अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन का एक ख़ास उद्देश्य है। जिस समय इस पुस्तक की रचना हुई उस समय हिंदी में साहित्यिक वादों एवं प्रवृत्तियों... की संख्या गिनाने में होड़ सी लगी हुई थी। इससे आधुनिक हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियों के बारे में काफी भ्राम फैला रहा था। इस अन्धाधुन्ध चर्चा निवारण था। इस भ्रम को दूर करने के लिए ही इन अध्ययन किया गया।

'कहानी: नयी कहानी' नामवर जी की पाँचवी पुस्तक है। नामवर जी के अनुसार यह पुस्तक एक बहुत बड़ी कमी को पूरा करनके के लिए लिखी गयी। यह पुस्तक नामवर जी के दस वर्षों के चिंतन का परिणाम है जिसके द्वारा उन्होंने कथा समीक्षा की एक पद्धति निकालने की कोशिश की। नामवर जी ने 'कहानी: नयी कहानी' में कथालोचन की पद्दति को निर्मित करने के साथ-साथ काव्यत्तेर समीक्षा के मानदण्ड को विकसित कर हिंदी समीक्षा को व्यापक बनाया।

'कविता के नये प्रतिमान' नामवर जी की छठवी पुस्तक है। उनकी असाधारण मेधा, कठोर श्रम एवं गहन विश्लेषण क्षमता का परिणाम है 'प्रतिमान' इसीलिए इस पुस्तक को साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया था। यह पुस्तक नामवरजी की सबसे विवादास्पद पुस्तक ही नहीं, वरन हिंदी आलोचन की चंद अत्यंत विवादास्पद पुस्तकों में से एक है। तीन खंडों में विभक्त इस पुस्तक में सोलह निबंध संग्रह है। पुस्तक के अंत में परिशिष्ट के रूप में नामवर जी ने नयी कविता के प्रतिमानों के आधार पर मुक्तिबोध की अन्यतम कविता 'अंधेरे में' की व्यावहारिक समीक्षा प्रस्तुत की है।

'दूसरी परंपरा की खोज' डॉ. नामवर सिंह की सातवी पुस्तक है। आठ अध्याय की यह छोटी सी पुस्तक अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह महत्वपूर्ण न सिर्फ नामवर सिंह के लिए वरन् पूरे हिंदी साहित्य के लिए। यदि आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के बहाने डॉ.रामविलास शर्मा ने हिंदी जाति की अवधारणा की खोज की एवं इस अवधारणा को स्थापित किया तो आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के माध्ययम से नामवर जी ने दूसरी परंपरा की अवधारणा की खोज की एवं उसे पूरी शक्ति के साथ स्थापित किया।

'वाद-विवाद संवाद' नामवर जी की आठवीं पुस्तक है। इस पुस्तक के निबंध मूलत; तीन समस्याओं से संबंद्ध है। आलोचना की विविध समस्याओं से संवाधित नौ निबंध है। जबकि काव्यालोचन से संबंधित पाँच निबंध है। हिंदी साहित्य की मौजूदा स्थिति पर तीन निबंध है। पुस्तक के अन्त में 'हाशिये पर' शीर्षक से एक परिशिष्ट है। अध्ययन एवं चिंतन के दौरान उठाने वाले वैचारिक स्फुलिंगों को यहाँ नामवर जी ने एकत्र किया है।

'कहना न होगा' नामवर जी की नौवी पुस्तक है। यह पुस्तक नामवर जी के सोलह साक्षात्कारों का संग्रह है। कहीब-करीब एक दशक की 'बातचीत' का एक आश है यह पुस्तक। यह नामवर जी कि वाचीक आलोचना की प्रथम पुस्तक।

निष्कर्ष यह कि नामवर जी के चिंतन में एक क्रमिक विकास दिखायी पडता है। अपनी वाचिक आलोचना के द्वारा नामवर जी ने इन ग्रंथों के जीवन मूल्यों को युवा पीढ़ी का संस्कार बनाया। आज भी वे पूरी ताकत से यह कार्य कर रहे हैं।

# श्री अक्षरगीता
**(ग्यारवाँ अध्याय)**

## डॉ. वीरेन्द्रशर्मा

अर्जुन बोले-

परमेश्वर अध्यात्मतत्व का
दिया आपने मुझको ज्ञान
कृपा हेतु मुझपर, उससे यह
नष्ट हुआ मेरा अज्ञान

सुना प्राणियों के उद्भव का
वर्णन विशद प्रलय का भी
कमलनयन, है सुनी आपकी
एवं शास्वत महिमा भी

अपने को कहते हैं जैसा
पुरुषोत्तम, वैसा ही है
ऐश्वररूप आपके भगवान
दर्शन की अभिलाषा है

रूप आपका देख सकूँगा
प्रभो, मानते यदि ऐसा
तो योगेश्वर मुझे दिखा दें
अव्यय आत्मरूप वैसा

श्रीभगवान बोले-

नाना वर्ण तथा आकृति के
विविध भाँति के दिव्य स्वरूप
शतशः विधि के, विधि सहस्त्रशः
पार्थ देख्र लो मेरे रूप

रुद्र, मरुत, आदित्य देख्र तो
भारत, वसु, अश्विनी को भी
विस्मय सभी देश लो वे जो
देख्रे पहले नहीं कभीं

एक अंश में स्थित, अर्जुन
सचराचर जग सब देख्रो
जो कुछ भी तुम चाहो मेरे
इस शरीर में ही देख्रो

लेकिन देख्र नहीं सकते तुम
मुझे नेत्र इस अपने से
दिव्यचक्षु देता हूँ, देख्रो
मेरा दिव्ययोग जिससे

संजय बोले-

महायोग परमेश्वर हरि ने
इस प्रकार सब बतलाया
ऐश्वररूप परम राजन्, फिर
भारतश्रेष्ठ को दिख्रलाया

आनन नयन बहुत हैं जिनके
दिव्यायुध बहु-आभूषण
अद्भुत परम सुदर्शन हैं जो
किए दिव्यमाला धारण
दिव्य सुगन्धि, लेप, अम्बर शुभ
जिनके दिव्य अनंत स्वरूप
सभी विस्मयों से मंडित जो
विश्वमुख्री परमेश्वर रूप

सूर्यसहस्त्र उदित हों नभ में
एक साथ उनकी जो द्योति
विश्वरूप परमात्मप्रभा के
तुल्य कदाचित् ही वह ज्योति

एक भाग में देवदेव के
तन में पूरा ही संसार
देख्रा वहाँ पार्थ ने स्थित
हुआ विभक्त अनेक प्रकार

विस्मय से आविष्ट हुए वे
बोले पुलकित तन होकर
शिर से नमन किया अर्जुन ने
विश्वदेव को जोड़े कर

अर्जुन बोले-

देख्र रहा हूँ देव आपके
तन में सभी देवगण हैं
विविध भाँति के प्राणी एवं
दल विशेष उनके भी हैं
पद्मासन पर शोभित हैं जो
ऐसे विधि हैं, शंकर भी
स्थिति ऋषि भी सभी वहाँ हैं
दिव्यसर्प हैं तथा सभी.

सभी दिशाओं में, विश्वेश्वर,
रूप आनन्त आपके हैं
भुजा अनेकों, उदर अनेकों
आनन नयन अनेकों हैं
नहीं आपका अंत कहीं है
मध्य आपका कहीं नहीं
विश्वरूप, मैं देख्र रहा हूँ
पुनः आदि भी नहीं कहीं.

तेजपुँज हैं आप, सर्वतः
दीप्त आपका प्रभा-प्रताप
मुकुटयुक्त हैं, गदा युक्त हैं
धारण किए चक्र हैं आप

कांन्ति आपकी दुर्निरीक्ष्य है
दीप्त अग्नि, रवि ज्योति समान
अपरिमेय, मैं देख्र रहा हूँ
आप सभी विधि, सभी प्रमाण

इस सम्पूर्ण विश्व को ही है
आश्रय परम आपका रूप
वेदितव्य भी स्वयं आप हैं
परम ब्रह्म परमात्मस्वरूप
धर्म सनातन के रक्षक हैं,
रूप आपका शास्वत है
पुरुष सनातन स्वयं आप हैं
ऐसा ही मेरा मत हैं.

आदि मध्य हैं नहीं अपके
कोई नहीं आपका अंत
सूर्य चन्द्र हैं नेत्र आपके
भुज अनंत, सामर्थ्य अनंत
देख्र रहा हूँ दीप्त अग्नि सम
आनन सभी आपके हैं
तपा रहे इस पूर्ण विश्व को
अपनी तेज प्रभा से है

मध्य स्वर्ग के तथा धरा के
अन्तराल में जो भी हैं
तथा दिशाएँ सभी व्याप्त भी
केवल एक आप से हैं
अद्भुत है यह रूप आपका
एवं घोर भयंकर है

## ये भी शोधपत्रिका के आजीवन (संरक्षक) बने (96)

**श्रीमती के. तुलसी देवी, श्री.एस. रमेशकुमार की पत्नी, जन्म १०-४-१९७५**

संपर्क : नं.२ए., २३ वाँ स्ट्रीट, अंबाला नगर, कीलकट्टालाई, चेन्नै ११७

भाषापरिचय : अंग्रेजी, तेलुगू, तमिल, हिन्दी

परीक्षाएं : डिग्री-१९९२, क़.ए.क्त सभा, चेन्नै-हिन्दी प्रचारक बी-कॉम-१९९८, अण्णामलै विश्व विद्यालय एम.ए.-२००६, द.भा.हि. प्रचार सभा, चेन्नै-१७, एम.फिल। पि.एच.डी. के लिए द.भा.हि. प्रचार सभा में काम चल रहा है

**गोइन्का सम्मान समारोह २०११: सम्मानित दो मालाधारी (१) डा. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर केरल (२) डा. एम.शेषन (तमिल) श्रीमती मधुधवन भी चित्र में हैं।**

**मोहन धारिया का हाल ही में सत्कार: महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा पूणे के केन्द्रीय अध्यक्ष एवं पद्मविभूषण मोहन धारिया का नागपूर राष्ट्रभाषा भवन में स्नेहिल सत्कार करते हुए जाने-माने कवि तन्हा नागपुरी, भूतपूर्व विधायक यादवराव देवगडे नरेन्द्र परिहार एकांत विक्रम सोनी व तेजवीर सिंग तेज नागपूर के कार्यक्रम में बजराई के विख्यसत गिरीश गाँधी दिखाई दे रहे हैं।**

**केरल हिन्दी साहित्य अकादमी का ३०वें वार्षिक समारोह प्रबद्ध प्रेक्षकों का दृश्य**

**श्री. सुदर्शन कार्तिकपरम्बिल के काव्य ओरुवट्टमकूडी का लोकार्पण। डा.चन्द्रशेखरन नायर पुस्तक का परिचय देते है।**

**श्री अक्षरगीता...**

इसे देख सम्पूर्ण लोकत्रय
अतिशय व्यथित, महात्मन, है
जो प्रवेश कर रहे आप में
देवसंघ सब वे ही हैं
जोड़े कर भयभीत हुए कुछ
करते भजन आपका हैं
कुछ महर्षिगण स्वस्ति कह रहे
ऐसा तथा सिद्धगण भी
उत्तम स्तुतियों के द्वारा
करें स्तवन-गायन भी
रुद्रादित्य मरुत्गण एवं
सिद्धसंघ भी साध्य सभी
विश्वेदेव पितर हैं जितने
तथा कुमारअश्विनी भी
वसुगण भी, गन्धर्व, सभी ये
जितने भी हैं यक्षासुर
देख रहे हैं सभी आपको
अतिशय ही विस्मित होकर
आनन बहुत, नेत्र बहु जिसमें
भुजा बहुत,बहु उदर विशाल
जंघा, चरण बहुत हैं जिसमें
बहु दंष्ट्रा हैं अति विकराल
है महान यह रूप आपका
जिसे देखकर लोक सभी
महाबली, हो रहे व्यथित हैं
व्यथित हो रहा हूँ मैं भी
हैं अनेकश: वर्ण आपके
नभ:स्पर्श करते हैं आप
हरे, आपका फैला है मुख
दीप्त आपका प्रभा-प्रताप
दीप्त विशाल नेत्र-छवि लेखकर
अन्त:करण व्यथित होता
शान्ति नहीं मिलती है मुझको
धीरज मुझे नहीं मिलता
दंष्ट्राओं के कारण ही हैं
भासमान जो अति विकराल
लखकर वक्त्र आपके ऐसे
प्रलयकाल के ज्यों हों ज्वाल
शान्ति नहीं मिलती है मुझको
नहीं दिशाओं का आभास
हों प्रसन्न देवेश्वर, मुझ पर
आप, जगत सम्पूर्ण निवास,
प्रमुख हमारे जो सेनानी
साथ साथ वह कर्ण तथा
सब प्रविष्ट हो रहे आप में
भीष्म पितामह, द्रोण यथा
भूपतिदल के साथ साथ ही
धार्तराष्ट्र वे सभी वहाँ
सब प्रविष्ट हो रहे आप में
साथ साथ ही सभी यहाँ
दंष्ट्राएँ विकराल आपकी
मुख भी अत: भयंकर हैं
बड़ी तीव्रता से सब के सब
घुसते जाते अन्दर हैं
उनमें से कुछ हैं ऐसे भी
चूर्ण हो गए सिर जिनके
दाँतों बीच आपके मुख में
दिखते फँसे सहित सिर के
अम्बुवेग बहु सरिताओं का
सागर प्रति बहता जैसे
मुख प्रदीप्त में सभी आपके
लोकवीर घुसते बैसे

(शेष अगले अंक में)

Kinfra

INSPIRING GROWTH

# EVERYTHING AT ONE PLACE

For 16 industry-friendly years, Kerala Industrial Infrastructure Development Corporation (KINFRA) has endeavoured to provide perfect settings to help businesses flourish in Kerala. KINFRA provides a wide variety of Walk-In-And-Manufacture Parks for setting up industries across Kerala. 20 different sector specific industrial parks are developed by identifying and promoting core competency of each region. Navaratna Companies like HAL, BEL and BEML, as well as private entrepreneurs have benefited from setting up their units in our parks.

**Key Sectors**

Food Processing | Apparel/Textiles | Knowledge-based industries | Rubber | Seafood Entertainment/Animation & Graming | IT/IIES | Hardware & Electronics | Bio-technology

**Kerala Industrial Infrastructure Development Corporation**
(A statutory body of Govt. of Kerala)
KINFRA House T.C.31/2312 Sasthamangalam, Thiruvananthapuram 695 010, Kerala, India.
Phone : 0471-2726585, Fax: 0471-2724773 E-mail:kinfra@vsnl.com, www.kinfra.com

Kinfra
INSPIRING GROWH

पंजीयन संख्या R. No. 26957 - 1996

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी के ३०वें वार्षिक समारोह में श्रीमती रानी गौरी अश्वति तिरुनाल लक्ष्मीबाई तंपुराट्टी अकादमी चेयरमान के हाथों से श्री मूकाम्बिका पुरस्कार स्वीकार करती हैं।

श्री. कानाई कुञ्ञिरामन की कविताएं का लोकार्पण करते हैं मुख्य मंत्री श्री.वी.एस.अच्युतानन्दन जी। खड़े हैं: सर्वश्री. पालोड रवि, कुञ्ञिकृष्णन, कानाई, के.जयकुमार आई.ए.एस., मुख्यमंत्री., डा.चन्द्रशेखरन नायर और डा.आरसू

अका: चेयरमेन डा.नायर की आत्मकथा का लोकार्पण महामहिम श्री. उन्नाटम तिरुनाल ग्रंथ की प्रथम प्रति के.पी.सी.सी. अध्यक्ष रमेश चेन्नित्तला जी को देते हुए करते हैं। खड़े हैं श्री.पी. परमेश्वरन जी एवं डा.एन.नायर जी

प्रो. एम.एच. शास्त्रीजी शतवर्षीय वर्षगाँठ मना रहे हैं। बैठे हैं - डा. टी.पी. शंकरनकुट्टि नायर, डा. एम.एच. शास्त्रीजी और डा.एन.चन्द्रशेखरन नायर

श्रीमती एल. कौसल्या अम्मालजी केरल हिन्दी साहित्य अकादमी के २९ वें वार्षिक सम्मेलन में एस.बी.टी. का हिन्दी साहित्य पुरस्कार महाप्रबंधक श्री. प्रधान जी के हाथों से स्वीकार करती हैं।

राज्य सभा की सदस्या एवं देश-सेवा-रत श्रीमती निर्मला देशपाण्डेजी केरल हिन्दी साहित्य अकादमी ग्रंथालय का निरीक्षण करती हैं। साथ अकादमी चेयरमेन, सचिव एवं ग्रंथालय की कार्य-कर्ती

केरल हिन्दी साहित्य अकादमी के लिए शोध-पत्रिका डा.एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्री निकेतन, तिरुवनन्तपुरम - ४
द्वारा मुद्रित संपादित और श्रीरामदासमिशन प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग हाऊस, तिरुवनन्तपुरम-८७ में मुद्रित।